हिंदुस्तानी संगीत

गायन एवं वादन

कक्षा 12 के लिए संगीत की पाठ्यपुस्तक

12152

विद्यया ऽमृतमश्नुते

एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

© NCERT not to be republished

Reprint 2025-26

12152 – हिंदुस्तानी संगीत— गायन एवं वादन
कक्षा 12 के लिए संगीत की पाठ्यपुस्तक

ISBN 978-93-5292-611-4

प्रथम संस्करण
सितंबर 2023 भाद्रपद 1945
पुनर्मुद्रण
अगस्त 2024 भाद्रपद 1946

PD 2.5T BS

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2023

₹ 285.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशन प्रभाग में प्रकाशित तथा एजुकेशनल स्टोर, एस–5, बुलंदशहर रोड, इंडस्ट्रियल एरिया, साइट–I गाज़ियाबाद (उ.प्र.) द्वारा मुद्रित।

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फ़ोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुन: प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रचारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशन की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन. सी. ई. आर. टी. केप्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नई दिल्ली 110 016 फ़ोन : 011-26562708

108, 100 फ़ीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III स्टेज
बेंगलुरु 560 085 फ़ोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फ़ोन :079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पानीहटी
कोलकाता 700 114 फ़ोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लेक्स
मालीगाँव
गुवाहाटी 781 021 फ़ोन :0361-2676869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	:	*अनूप कुमार राजपूत*
मुख्य उत्पादन अधिकारी	:	*अरुण चितकारा*
मुख्य संपादक	:	*बिज्ञान सुतार*
मुख्य व्यापार प्रबंधक	:	*अमिताभ कुमार*
संपादन सहायक	:	*ऋषिपाल सिंह*
सहायक उत्पादन अधिकारी	:	*सुनील कुमार*

© NCERT not to be republished

आमुख

प्यारे बच्चो,

ललित कलाओ में संगीत का एक महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय संगीत ने न केवल भारत में बल्कि सम्पूर्ण विश्व में अपनी एक उत्कृष्ट पहचान बनाई है। भौगोलिक परिस्थितियाँ, वेशभूषा, दिनचर्या, रीति-रिवाज, इतिहास, भाषा, विज्ञान, आध्यात्म इत्यादि सभी को समावेशित करते हुए भारतीय संगीत को विश्वव्यापी लोकप्रियता और सम्मान मिला है। दुनिया भर के संगीतकारों ने इसकी महत्ता और श्रेष्ठता को स्वीकार किया है।

यह पाठ्यपुस्तक उच्चतर माध्यमिक स्तर पर आप सभी बच्चों की दक्षताओं को बढ़ाने के लिए है, जो हिंदुस्तानी संगीत में गायन एवं वादन सीख रहे हैं। इस पुस्तक में भारतीय संगीत की उत्पत्ति एवं विकास, हिंदुस्तानी संगीत के महत्वपूर्ण आधार ग्रंथ एवं उनमें वर्णित विषयवस्तु की विस्तृत जानकारी, समकालीन समय में प्रचलित राग प्रणाली का महत्व इत्यादि का विवरण है। आप सभी बच्चे हिंदुस्तानी संगीत की इस पाठ्यपुस्तक के अध्यायों को पढ़कर अनुभूति करेंगे की भारतभूमि कितनी समृद्ध है। इसकी माटी के कण-कण में वह मधुर ध्वनि समाहित है जिसे 'संगीत' का नाम दिया जाता है। प्रकृति के पहलुओं को समझने के लिए भी संगीत बना है। शिशु की चपलता को समझने के लिए संगीत द्वारा अभिव्यक्ति है। वेद पाठ, भक्ति जन-जन तक संगीत के सहारे व्याप्त है। ये तो बहुत थोड़े उदाहरण हैं। किसी भी विषय को परखें तो आप समझेंगे संगीत द्वारा हर बात कही जा सकती है। ऐसा क्यों? गुणीजन कहते हैं, "संगीत अर्थात कानों को प्रिय लगने वाली कर्णप्रिय ध्वनि। इसी कारण संगीत सभी जीवात्माओं को भाता है।

इसी कारण *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में भी प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) से माध्यमिक शिक्षा और शिक्षक शिक्षा के विभिन्न चरणों में विस्तार से वर्णित है कि संगीत, कला एवं शिल्प कला विषयों पर विशेष बल दिया जाए। विद्यार्थियों के सर्वांगीण संतुलित विकास के लिए तथा उम्र के प्रत्येक पड़ाव पर विद्यार्थियों के लिए यह महत्वपूर्ण है। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* आगे इस बात पर प्रकाश डालती है कि विद्यार्थियों को, विशेष रूप से माध्यमिक विद्यालय में अध्ययन करने के लिए, अधिक लचीलापन और विषयों के चुनाव के विकल्प दिए जाएँगे — इनमें कला और शिल्पकला भी शामिल होंगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने बहुभाषावाद और संस्कृत सहित प्राचीन भारतीय भाषाओं को सीखने पर भी विशेष बल दिया है। संस्कृत ग्रंथों में संगीत का अगाध भंडार सन्निहित है। इस भंडार में छिपे संगीत के विभिन्न तत्वों का शोध द्वारा उद्धार करना भी सबके लिए आवश्यक है। संगीत और भाषा दोनों परस्पर जुड़े हैं और इसीलिए संगीत के माध्यम से भाषा और भाषा के माध्यम से संगीत को समझने के मार्ग को प्रशस्त करना आवश्यक है। इन सभी बातों को अंतर्निहित कर संगीत की परंपरा को आगे बढ़ाने हेतु शिक्षा आवश्यक है।

© NCERT not to be republished

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 स्पष्ट करती है कि कला शिक्षा को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लाने के लिए उच्च शिक्षा संस्थानों एवं शिक्षक शिक्षा संस्थानों में संगीत के पाठ्यक्रम को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। गायन एवं वादन की विविध विधाओं का प्रस्तुतीकरण आज शिक्षार्थियों, कलाकारों व संगीत मर्मज्ञों के जीविकोपार्जन का भी एक उत्तम साधन है। भारतीय शास्त्रीय संगीत की विश्व स्तर पर एक अनूठी पहचान है। इसी संस्कृति का भविष्य में संरक्षण एवं उन्नयन का दायित्व भी हमारे कंधों पर है। इन सभी मार्मिक बातों को आधार मानकर इस पाठ्यपुस्तक की रचना की गई है। भारतभूमि को अनन्य बनाने के लिए इसमें पनपी सभी कलाओं को महत्व प्रदान करना हमारा दायित्व है। आइए, सब मिलकर इस धरोहर को संभालें।

पाठ्यपुस्तक की गुणवत्ता और सुधार के लिए रा.शै.अ.प्र.प. वचनबद्ध है तथा सुझावों व टिप्पणियों का स्वागत करती है जो भविष्य में इसके संशोधन और परिष्करण में हमारी सहायता करेंगे। आशा करता हूँ कि विद्यार्थी इस पाठ्यपुस्तक में उपलब्ध विषयवस्तु एवं पाठ्यसामग्री का भरपूर लाभ उठाएँगे।

प्रोफेसर दिनेश प्रसाद सकलानी
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
05 जुलाई 2022

© NCERT not to be republished

प्राक्कथन

प्यारे बच्चो,

ललित कलाओं में संगीत का एक महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय संगीत ने न केवल भारत में बल्कि विश्व में अपनी उत्कृष्ट पहचान बनाई है। मानव जीवन के विभिन्न क्रियाकलापों से जुड़े होने और अपनी आध्यात्मिक ऊँचाइयों के कारण भारतीय संगीत को विश्वव्यापी लोकप्रियता और सम्मान प्राप्त हुआ है। दुनिया भर के संगीतकारों ने इसकी श्रेष्ठता को स्वीकार किया है। मौसम तथा अवसर चाहे कोई भी हो, संगीत ने अपने सुरों से हमेशा सामाजिक व सांस्कृतिक समारोहों के आकर्षण को बढ़ाया है। भगवदोपासना की सभी पद्धतियों में अपने देवता की आराधना के लिए संगीत के स्वर और लय का प्रयोग किया जाता है। संगीत से मन को एकाग्रचित करने में सहायता मिलती है। इसी कारण प्रात:काल में संगीत के माध्यम से दिन की शुरुआत करने पर मन शांत, आनंदमय एवं ओजमय रहता है। किसी शिशु के जन्म से लेकर किसी वृद्ध की मृत्यु तक हमारे समाज में हर्ष, शोक, करुणा आदि उद्‌गारों की अभिव्यक्ति में भी संगीत की विशिष्ट भूमिका रहती है। संगीत की इन्हीं विहंसते, मचलते और भावनाओं के असीम आकाश में अठखेलियाँ करते स्वरों को अनुशासित और लयबद्ध करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार की गायन विधाएँ और वाद्यों का आविष्कार एवं निर्माण प्राचीन काल से होता रहा है।

स्वर लय एवं पद के समावेश से संगीत का सृजन होता है। भली-भाँति जाँच करने से समझ में आता है कि हमारे जीवन के बहुत से क्रियाकलाप संगीत से जुड़े हुए हैं और संगीत हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग है। आकाश में सूर्य किरणों के आगमन के साथ ही जहाँ एक ओर मंदिरों में आरती के स्वर गूँजने लगते हैं, वहीं गुरुद्वारों में कीर्तन, चर्च में ईसा मसीह के गीत तथा मस्जिदों में अज़ान के स्वर गूँजने लगते हैं। कुछ वाद्य यंत्र, जैसे— घंटा, मंजीरा, पिआनो, ढोलक, हारमोनियम इत्यादि की ध्वनियाँ भी प्रात: काल की सौम्यता को उत्कृष्ट बनाती हैं।

जब आप साँस लेते हैं तो क्या उसमें कुछ संगीतमय होता है? सोचिए और विचार कीजिए कि हमारे दैनिक जीवन में बात करना, अपने हाथ-पैर को हिलाना, कोई भी वाहन चलाना, एक पक्षी का आकाश में उड़ना, रेलगाड़ी का चलना, सूर्य का अपनी धुरी पर घूमना एवं पृथ्वी का उसके चारों तरफ चक्कर लगाना, पेड़-पौधों का झूमना और भी ना जाने कितने क्रियाकलाप हमारे चारों तरफ होते रहते हैं। क्या आप इन क्रियाओं में स्वाभाविक रूप से व्याप्त सांगीतिक ध्वनि (स्वर और लय युक्त) को महसूस कर सकते हैं? अगर इन सभी क्रियाओं पर सोच-विचार करें, तो पता चलता है कि संगीत के तत्व सर्वव्यापित हैं।

हमारे देश का संगीत विभिन्नताओं का भंडार है। प्रत्येक प्रांत अपनी प्रांतीय विशेषताओं में समृद्ध होने के कारण हमारे देश में संगीत का अथाह सागर है जिसमें वहाँ के पर्व, ऋतुओं, प्रकृति आदि का मनोरम चित्रण होता है। संगीत हमसे और हम संगीत से कितनी गहराई, मज़बूती और सुदृढ़ता से जुड़े हुए हैं, यह बात आसानी से तब समझी जा सकती है जब हमारे जीवन के हर क्षण,

© NCERT not to be republished

हर मांगलिक अवसर, हर रीति-रिवाज के साथ हम संगीत को जोड़ पाते हैं। कई सदियों से भारतीय संगीत के विभिन्न पक्षों पर संगीतज्ञों द्वारा शोध एवं विकास की परंपरा चली आ रही है। संगीत के मनीषियों द्वारा किए गए इस विशाल शोध के सागर से प्राप्त इन तथ्य रूपी मोतियों को आप जैसे बुद्धिमान, विकासशील एवं सृजनात्मक बच्चों तक यह पाठ्यपुस्तक *हिंदुस्तानी संगीत— गायन एवं वादन* के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए अत्यंत हर्ष हो रहा है। यह पाठ्यपुस्तक हिंदुस्तानी संगीत के अंतर्गत गायन एवं वादन के विषयों पर विचार-विमर्श हेतु तैयार की गई है।

बच्चों, आप अपने परिवेश में किसी-न-किसी प्रकार का संगीत अवश्य सुनते होंगे। वह संगीत की कोई भी विधा हो सकती है— लोक संगीत, सुगम संगीत, शास्त्रीय व उपशास्त्रीय। इन सभी विधाओं की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। शास्त्रीय संगीत जहाँ एक ओर शास्त्रबद्ध व नियमबद्ध होने के कारण हमें दैनिक जीवन व क्रियाकलापों में अनुशासित होने के लिए प्रेरित करता है वहीं दूसरी ओर लोकसंगीत जन-साधारण की भावनाओं को व्यक्त करने का सबसे सरल माध्यम माना जाता है। इससे हम सामाजिक परिवेश, व्यक्ति विशेष, भौगोलिक परिवेश, ऐतिहासिक गाथाओं विभिन्न परंपराओं इत्यादि के बारे में जान सकते हैं।

ऐसी मान्यता है कि जब मानव ने अपने भावों को व्यक्त करना चाहा, तब श्रुतियाँ सहायक बनीं। अ, ओ, आ, इ ऐसी ध्वनियाँ सुनाई दीं, जो कानों को मधुर लगीं और तभी से संगीत इस धरती पर जीवनदायी मान लिया गया। इन सांगीतिक ध्वनियों का प्रयोग करके पूर्व शताब्दियों के अनेक विद्वानों ने कठिन परिश्रम से इन्हें सजाया, सँवारा और इन पर शोध किए। उपरोक्त सभी बातों को आप जैसे बच्चों तक पहुँचाना हमारा कर्तव्य है। अत: संगीत शोध के भण्डार से पाठ्यक्रमानुसार कुछ विशेष प्रसंगों को चुनकर हम आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं।

इस पाठ्यपुस्तक में हिंदुस्तानी संगीत के प्राचीनतम इतिहास का व्याख्यान है। भारतीय संगीत के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए संगीत की उत्पत्ति एवं विकास का वृहद वर्णन, वैदिक काल से तेरहवीं शताब्दी, चौदहवीं शताब्दी से आधुनिक काल तक संगीत के विकास, घरानों के उद्गम एवं विकास, संगीत शिक्षा में शिक्षण संस्थानों के विकास, हिंदुस्तानी संगीत के विभिन्न महत्वपूर्ण आधार ग्रंथ एवं उनमें वर्णित विषयवस्तु की विस्तृत जानकारी, समकालीन समय में प्रचलित राग प्रणाली का महत्व, विशिष्ट सांगीतिक परिभाषाएँ जो शास्त्रीय संगीत के आधार तत्व हैं इत्यादि का परिचय दिया गया है। हिंदुस्तानी संगीत के प्रयोगात्मक पक्ष पर प्रकाश डालते हुए पाठ्यक्रम में दिए गए रागों का विवरण एवं उनमें गाई-बजाई जाने वाली कुछ बंदिशें दी गई हैं।

इस पाठ्यपुस्तक में विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी द्वारा निर्मित हिंदुस्तानी संगीत में प्रचलित स्वर, ताल, लिपि, पद्धति, अर्वाचीन एवं वर्तमान गायन शैलियों के रूप में जाति एवं प्रबंध गान, ध्रुपद इत्यादि का सविस्तार वर्णन, वाद्यों का वर्गीकरण, प्रचलित वाद्यों का सचित्र वर्णन, प्रमुख तालों के ठेके एवं लयकारी, गायन एवं सितार वादन के कतिपय घरानों का उल्लेख, संगीत के महान कलाकारों एवं संगीतज्ञों का योगदान आदि विषयों का सविस्तार वर्णन किया गया है। इस पाठ्यपुस्तक को रोचक तथा ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए पाठ्यपुस्तक में लघु तथा मनोरंजक

© NCERT not to be republished

परियोजनाओं को भी सम्मिलित करने का प्रयास किया गया है। आप सभी हिंदुस्तानी संगीत की इस पाठ्यपुस्तक के अध्यायों को पढ़कर अपना ज्ञानवर्धन करें। यह पाठ्यपुस्तक उच्चतर माध्यमिक स्तर पर उन बच्चों की दक्षताओं को बढ़ाने के लिए है, जो हिंदुस्तानी संगीत में गायन एवं वादन सीख रहे हैं।

इस पाठ्यपुस्तक का अध्ययन करने के प्रतिफल—

- भारतीय संगीत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं विकास का ज्ञान।
- हिंदुस्तानी संगीत के सैद्धांतिक एवं प्रयोगात्मक पक्ष की समझ।
- वैदिक काल से आधुनिक काल तक संगीत में लिखे गए प्राचीन ग्रंथों का परिचय।
- गायन एवं वादन की मुख्य विशेषताओं पर मनन-चिंतन।
- हिंदुस्तानी संगीत की प्रचलित स्वर-ताल लिपि पद्धतियों को जानना।
- नानाविध बंदिशों की रूपरेखा।
- गायन के साथ संगत के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले वाद्य यंत्र तथा अन्य वाद्यों की संरचना एवं वादन-विधि का ज्ञान।
- हिंदुस्तानी संगीत के विकास में सहायक प्रसिद्ध कलाकारों एवं उनके घरानों का योगदान।
- संगीत जगत के कतिपय मुख्य कलाकारों का परिचय, जिनके योगदान से संगीत विश्व में मुखरित हुआ।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद द्वारा पहली बार *हिंदुस्तानी संगीत— गायन एवं वादन* पाठ्यपुस्तक विकसित की गई है। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* के दिशा निर्देशानुसार यह पाठ्यपुस्तक बनाई गई है। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में शिक्षा में संगीत का महत्वपूर्ण स्थान, स्वदेशी संस्कृति एवं विश्वविद्यालय या उच्च शिक्षा में कलाओं की शिक्षा जैसे कई बिंदुओं पर बल दिया गया है। उसी संदर्भ में इस पाठ्यपुस्तक की संरचना की जा रही है। हम आशा करते हैं कि यह पाठ्यपुस्तक आपके लिए अत्यंत लाभदायक सिद्ध होगी। आप पाठ्यपुस्तक में सुधार हेतु अपने सुझाव हमें अवश्य भेजें ताकि द्वितीय संस्करण में इस पाठ्यपुस्तक को और भी समृद्ध बनाया जा सके।

शर्बरी बनर्जी
असिस्टेंट प्रोफेसर
कला एवं सौंदर्यबोध शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद

© NCERT not to be republished

आभार

इस पुस्तक के निर्माण में सहयोग के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (रा.शै.अ.प्र.प.) विभिन्न संस्थाओं, विषय-विशेषज्ञों, शिक्षकों एवं विभागीय सदस्यों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती है।

परिषद कला एवं सौंदर्यबोध शिक्षा विभाग की पवन सुधीर, *विभागाध्यक्ष* एवं ज्योत्सना तिवारी, *प्रोफेसर* के प्रति कृतज्ञ है, जिन्होंने अपना मूल्यवान समय और सहयोग प्रदान कर इस पुस्तक को उपयोगी बनाने हेतु महत्वपूर्ण सुझाव दिए। इस पुस्तक के निर्माण में श्वेता उप्पल, *मुख्य संपादक* का योगदान भी सराहनीय है।

परिषद स्वर्गीय लक्ष्मीनारायण गर्ग, संगीत कार्यालय, हाथरस के संपादक के प्रति अपना आभार प्रकट करती है, जिन्होंने क्रमिक पुस्तक मालिका से रागों की बंदिशें छापने की अनुमति प्रदान की।

परिषद, इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। पाठ्यपुस्तक परामर्श समिति के सदस्यों के अतिरिक्त इस पुस्तक को अंतिम रूप प्रदान करने के लिए परिषद नीरा चौधरी, *विभागाध्यक्ष* (संगीत विभाग), मगध महिला कॉलेज, पटना विश्वविद्यालय; दीनानाथ मिश्र, *अध्यापक* (संगीत) केन्द्रीय विद्यालय, मोतीहारी, बिहार; मल्लिका बैनर्जी, *सहायक प्रोफेसर*, स्कूल ऑफ परफॉर्मिंग एंड विजुअल आर्ट्स, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली; एवं प्रज्ञा वर्मा (सी.बी.एस.ई.) नई दिल्ली के सहयोग के प्रति सहृदय आभार प्रकट करती है।

परिषद संगीत नाटक अकादमी के सदस्यों, रीता स्वामी, *सचिव*, जयन्त चौधरी एवं प्रीत पाल (फोटो सेक्शन) के प्रति आभारी है जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री तथा सहयोगियों की मदद लेने में उदारतापूर्वक सहयोग प्रदान किया।

पुस्तक के विकास के विभिन्न चरणों में सहयोग के लिए कला एवं सौंदर्यबोध शिक्षा विभाग की शिखा श्रीवास्तव, *जे.पी.एफ.* (संविदा); संजू शर्मा एवं मोहम्मद आतिर, *ग्राफिक डिजाइनर* (संविदा); संजीद अहमद, *डी.टी.पी. ऑपरेटर* (संविदा); काजल कुमारी एवं इन्द्र जीत, *कप्यूंटर टाइपिस्ट* (संविदा) के प्रति भी परिषद आभार प्रकट करती है। इस पुस्तक के संपादन के लिए कहकशा, *सहायक संपादक* (संविदा), प्रकाशन प्रभाग, रा.शै.अ.प्र.प., पाठ्यपुस्तक डिजाइनर श्वेता राव एवं पुस्तक में उपयोग किए गए रेखांकन के लिए मौसमी चौधरी के प्रति भी परिषद सहृदय आभार व्यक्त करती है।

इस पाठ्यपुस्तक के निर्माण में कई शिक्षकों ने योगदान दिया, परिषद उन सभी के प्रति अपना आभार प्रकट करती है।

परिषद, प्रकाशन कार्य में सक्रिय सहयोग के लिए प्रकाशन प्रभाग, रा.शै.अ.प्र.प. का भी आभार व्यक्त करती है।

© NCERT not to be republished

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

मुख्य सलाहकार

अनुपम महाजन, *प्रोफेसर*, *भूतपूर्व अधिष्ठात्री* एवं *विभागाध्यक्ष*, संगीत एवं ललित कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

मधु बाला सक्सेना, *प्रोफेसर* (सेवानिवृत्त) संगीत एवं ललित कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; *पूर्व विभागाध्यक्षा*, संगीत एवं नृत्य विभाग, अधिष्ठात्री, प्राच्य विद्या संकाय, *कार्यकारी कुलपति*, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, हरियाणा

सदस्य

अरूणा कुमारी, *अध्यापिका* (संगीत), केंद्रीय विद्यालय, मशरक, बिहार

दीप्ती बंसल, *एसोसिएट प्रोफेसर*, संगीत विभाग, दौलत राम महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रेरणा अरोड़ा, *एसोसिएट प्रोफेसर*, संगीत विभाग, जानकी देवी महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

वासिफुद्दीन डागर (पद्मश्री), *ध्रुपद गायक*, *अध्यक्ष*, एन.जी.ओ, ध्रुपद सोसाइटी

विजय शंकर मिश्र, *संगीत लेखक*, *निदेशक*, सोसाइटी फॉर एक्शन थ्रू म्यूजिक, नई दिल्ली

सचिन सागर, *संगीत लेखक,* उत्तर प्रदेश

सुनंदा पाठक, *एसोसिएट प्रोफेसर*, (सेवानिवृत्त), श्यामा प्रसाद मुखर्जी महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सदस्य समन्वयक

शर्बरी बैनर्जी, *असिस्टेंट प्रोफेसर*, कला एवं सौंदर्यबोध शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली

© NCERT not to be republished

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][**संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य**] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2][**राष्ट्र की एकता और अखंडता**] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "राष्ट्र की एकता" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

© NCERT not to be republished

भूमिका— भारतीय संगीत का ऐतिहासिक अवलोकन

संगीत यानी सर्वश्रेष्ठ ललित कला, जो मानवीय भावनाओं एवं ईश्वरीय आराधना की अभिव्यक्ति का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। इसकी उत्पत्ति के विषय में भारत में जो पौराणिक मत प्रचलित हैं जिनमें से दो अधिक प्रसिद्ध हैं— पहले मत के अनुसार, जगत के रचयिता ब्रह्माजी ने धरती पर मनुष्यों को विभिन्न प्रकार के कष्टों से ग्रसित देखकर उनके आत्मिक और बौद्धिक आनंद के लिए संगीत को रचा। ब्रह्माजी से इसे भगवान शंकर ने सीखा। शंकर जी से यह कला माता सरस्वती तक पहुँची। माता सरस्वती से इसे सीखकर गंधर्व नारद ने इसे अन्य गंधर्वों और किन्नरों सहित महर्षि भरत और हनुमान आदि को भी सिखाया, जिनके माध्यम से यह कला धरती वासियों तक पहुँची। दूसरे मत के अनुसार— संगीत की उत्पत्ति 'ॐ' शब्द से हुई है। ॐ शब्द के तीन अक्षर अ, उ और म् क्रमश: ब्रह्मा, विष्णु और महेश के प्रतीक हैं। ॐ से ही क्रमश: नाद, नाद से श्रुति और श्रुति से स्वरों की उत्पत्ति मानी गई है।

सामान्यत: संगीत की उत्पत्ति धर्म से मानी गई है। भारत में इसे विभिन्न देवी-देवताओं से जोड़कर देखा जाता है, साथ ही भक्ति एवं आनंद का माध्यम भी माना जाता है। भगवान शंकर को नटराज कहकर ताडंव नृत्य का प्रणेता एवं भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक और श्री जैसे रागों का सर्जक माना गया है। पार्वती जी की शयन मुद्रा देखकर रूद्र वीणा का निर्माण एवं स्वयं पार्वती को लास्य नृत्य का सर्जक माना जाता है। ऐसा माना गया है कि तांडव और लास्य नृत्य के संयोग से ही अन्य शास्त्रीय नृत्यों का आविष्कार हुआ है। माँ सरस्वती को वीणा के साथ, श्री कृष्ण को वंशी और नृत्य के साथ, गणेश को मृदंग के साथ और नारद को इकतारे के साथ जोड़कर भारतीय संगीत के महत्व को प्रतिपादित करना हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है।

दुनिया भर का संगीत धर्म से जुड़ा हुआ है। यूनानी भाषा में संगीत के लिए मौसिकि (*Mousike*), लैटिन और पुर्तगाली भाषा में मुसिका (*Musica*), जर्मन भाषा में मूसिक (*Musik*) और अंग्रेजी भाषा में म्यूज़िक (*Music*) जैसे शब्दों का प्रयोग होता है। अरबी और फ़ारसी आदि भाषाओं में इसे मौसीकी कहा जाता है। इन सभी शब्दों का आधार यूनानी भाषा का म्यूज (*Muse*) शब्द है, जिसका अर्थ है— गान की प्रेरक देवी ("The Inspiring Goddess of Songs")।

चित्र अ— लोक संगीत प्रस्तुत करते हुए महाराष्ट्र के कलाकार

भारत में प्रचलित सभी धर्मों, जैसे— हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, सिख, बौद्ध और जैन आदि में संगीत को तो महत्व

© NCERT not to be republished

चित्र आ— हिमाचल प्रदेश का लोक वाद्य प्रस्तुत करते हुए कलाकार

मिला ही, इनके संदेशों, उपदेशों और विचारों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए भी संगीत का ही सहारा लिया गया। ऐसा माना जाता है कि संगीत के माध्यम से कही गई बात सीधे हृदय तक पहुँचती है और फिर वहीं बस जाती है।

संगीत की उत्पत्ति के विषय में एक मनोवैज्ञानिक मत है जो अत्यंत महत्वपूर्ण है। आदिम मानव, जो जंगलों में रहता था, जब भाषा और बोली का जन्म नहीं हुआ था तब वह अपनी बात, अपनी भावनाएँ लोगों तक कैसे पहुँचाता था? जंगल में अचानक आग लग जाने, किसी हिंसक पशु के आ जाने, किसी की मृत्यु होने अथवा कोई हर्षदायक घटना घटित होने पर वह अपने मनोभावों को आखिर कैसे व्यक्त करता होगा? इन प्रश्नों के यदि उत्तर खोजे जाएँ तो स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि वाणी के उतार-चढ़ाव और हस्तमुद्राओं के माध्यम से ही तो भावनाओं की अभिव्यक्ति होती थी। वाणी का यह उतार-चढ़ाव ही आगे चलकर नाद कहलाया। यह ध्वनि अर्थात नाद अग्नि और वायु के संयोग यानी दो वस्तुओं के घर्षण से उत्पन्न होती है। लेकिन सामान्य ध्वनि और नाद में एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंतर होता है। नाद सिर्फ़ उस मधुर और कर्णप्रिय ध्वनि को कहा जाता है जो संगीतोपयोगी हो। शोरगुल, चीखपुकार, गाड़ी के भोंपू (हॉर्न) आदि जैसी ध्वनियों को नाद के अंतर्गत नहीं रखा जा सकता है। इस संगीतोपयोगी नाद को आहत नाद कहा जाता है और इसे मुक्तिदायक माना जाता है। श्रुतियाँ, स्वर तथा गायन, वादन एवं नृत्य की समस्त रचनाएँ आहत नाद के ही अंतर्गत आती हैं।

नाद का एक अन्य प्रकार है, जिसे सुना नहीं सिर्फ़ अनुभव किया जा सकता है। यह किसी घर्षण अथवा प्रहार किए बिना ही उत्पन्न होती है। इसलिए इसे अनाहत नाद कहते हैं। इस नाद को ऋषि-मुनियों, योगियों और श्रेष्ठ संगीतज्ञों ने अपनी आध्यात्मिक गहराइयों के कारण बार-बार अनुभव किया है और इसका गुणगान किया है। जब भी कोई साधक अपनी साधना की गहराई में जाकर समाधि की अवस्था में पहुँचता है, तो वहाँ उसके शरीर में स्थित सात योगिक चक्रों से सात स्वरों की गुंजार हृदय की गहराइयों में स्पष्ट सुनाई देती है। अंतरात्मा की इसी आवाज़ से प्रेरणा पाकर भिन्न-भिन्न स्वर लहरियों का जन्म हुआ है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के अनुसार संगीत की दो भिन्न धाराएँ प्रवाहित होती रही हैं— मार्गी संगीत और देशी संगीत। मार्गी संगीत के विषय में विद्वानों का मानना है कि यह पूरी तरह से नियमबद्ध था और पूजा तथा यज्ञ आदि के अवसर पर पूरे विधि-विधान के साथ इसका गान होता था। इसके अंतर्गत मूलत: वैदिक ऋचाओं का ही गायन होता था। ऐसा माना जाता है कि इसके गायन से मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होता था, अतः इसे मार्गी संगीत कहा गया। इसमें किसी भी प्रकार के परिवर्तन की अनुमति नहीं होती थी।

© NCERT not to be republished

सभा समारोहों में आमोद-प्रमोद के लिए, आम लोगों द्वारा लोक रंजन के लिए जिस संगीत की प्रस्तुति हुई वह देशी संगीत कहलाया। हृदय रंजन इसका मुख्य उद्देश्य था। इस संगीत में स्थानीय वातावरण, उच्चारण भेद, शैलीगत भिन्नता आदि के कारण स्थान-स्थान पर परिवर्तन होते रहे। मूलत: स्थान विशेष से जुड़े होने के कारण ही इसे देशी संगीत कहा गया। जन-समाज में लोक रंजन के लिए प्रस्तुत सभी प्रकार के संगीत को देशी संगीत के अंतर्गत रखा जा सकता है, चाहे वह लोक संगीत हो अथवा शास्त्रीय संगीत।

विभिन्न जिलों और प्रदेशों के लोक संगीत अपनी सुर, लय, बोली और भाषा आदि के आधार पर एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न होते हैं। यही लोक संगीत क्रमश: सांगीतिक गुणवत्ता से विकसित होता रहा। इसी कारणवश हमें दिखता है कि शास्त्रीय और उपशास्त्रीय संगीत की अनेक धाराएँ भी लोक संगीत की कोख से ही जन्मीं हैं। इसके अंतर्गत ध्रुवपद, धमार, ख्याल, ठुमरी आदि जैसी गायन विधाओं को रखा जा सकता है और स्थान-भेद के कारण इनकी प्रस्तुतियों में भी अंतर दिखते रहे हैं। इसी अंतर के कारण ध्रुवपद की अलग-अलग वाणियाँ बनीं तो ख्याल के अलग-अलग घराने और ठुमरी की अलग-अलग शैलियाँ।

देशी संगीत का उल्लेख सर्वप्रथम सातवीं शताब्दी के मतंग मुनि ने किया था। तेरहवीं शताब्दी के शार्ङ्गदेव के मतानुसार, मार्गी संगीत वह है जिसके कर्ता-अविष्कर्ता, ब्रह्मा, शंकर आदि देवता हैं और जिसका स्वरूप पूर्णत: शास्त्रोक्त है। जबकि देशी संगीत जनरुचि पर आधारित है। यही कारण है कि मार्गी संगीत कुछ ही लोगों यानी विद्वत वर्ग तक ही सीमित रहा, जबकि देशी संगीत जन-जन में समाहित होकर अग्रसर हुआ।

गायन का आधार 'नाद' यानी ध्वनि होता है। इनकी तारता अर्थात ऊँचाई और नीचाई के आधार पर विद्वानों ने 22 श्रुतियों और 7 मुख्य तथा 12 विकृत स्वरों का निर्धारण किया है जिन्हें क्रमश: षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद कहा गया। सुविधा की दृष्टि से इन्हें सा रे ग म प ध और नि कहते हैं। इनमें सा और प अचल स्वर हैं। रे, ग, ध और नि के क्रमश: शुद्ध और कोमल दो तरह के स्वर तथा मध्यम का शुद्ध और तीव्र रूप प्रचलन में है। इस तरह आज कुल 12 स्वर प्रचलित हैं, लेकिन वैदिक काल में सिर्फ़ तीन स्वरों के आधार पर संगीत की प्रस्तुतियों का प्रचलन था। सात स्वरों के एक समूह को सप्तक कहा जाता है।

वैदिक काल में उदात्त, अनुदात्त, स्वरित— ये तीन स्वर सर्वप्रथम प्रचलन में थे; इसके बाद क्रमश: तीन से पाँच व पाँच से सात स्वरों का विकास हुआ।

स्वरों की उत्पत्ति के विषय में भी विद्वानों के कई मत प्रचलित हैं, एक संक्षिप्त दृष्टि उन पर भी डालते हैं। एक बार पर्वत मालाओं में सफ़र के दौरान हज़रत मूसा को आकाशवाणी सुनाई दी कि, 'मूसा अपना असा (हथियार) पत्थर पर मार'। हज़रत मूसा ने जब अपना असा पत्थर पर मारा तो उस पत्थर के सात टुकड़े हो गए और उनसे सात अलग-अलग ध्वनियाँ उत्पन्न हुईं जिन्हें सा रे ग म प ध और नि कहा गया। नारद कृत नारदीय शिक्षा के अनुसार मयूर की बोली से सा, गाय की

© NCERT not to be republished

चित्र इ— खोल के साथ बाँसुरी

आवाज़ से रे, बकरे से ग, कौवे से म, कोयल से प, घोड़े से ध और हाथी से नि स्वरों की उत्पत्ति हुई है।

जैन आचार्य पार्श्व देव ने अपने ग्रंथ *संगीत समय सार* में लिखा है कि सिर, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दाँत इन छह स्थानों से उत्पन्न स्वर षड्ज कहलाया। इसी षड्ज पर शेष छह स्वर आश्रित होते हैं। नाभि से उठकर कंठ तथा सिर से होते हुए जो ध्वनि वृषभ के समान नाद उत्पन्न करती है, वह ऋषभ कहलाती है। नाभि से उत्पन्न तथा कंठ एवं सिर से संबद्ध वह ध्वनि जो गंधर्वों को सुख प्रदान करती है, गांधार नाम से जानी जाती है। नाभि से उठकर हृदय से समाहित मध्यम स्थान में स्थिर होकर स्वर उत्पत्ति करने वाला स्वर मध्यम कहलाता है। होंठ, तालु, सिर और हृदय — इन पाँच स्थानों से उत्पन्न स्वर को पंचम कहा गया। वायु जब हृदय, कंठ, होठ, तालु और सिर से होते हुए नाद उत्पन्न करता है तो उसे धैवत कहा जाता है। इसी प्रकार वायु के द्वारा कंठ, तालु और सिर का समर्थन न होने पर जिस स्वर से सभी स्तरों पर विराम लगता है, वह निषाद कहलाता है। जैन धर्म के लगभग सभी तीर्थंकरों ने अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए संगीत को माध्यम बनाया।

जब मानव कंठ से सृजित स्वर लहरियों ने लोगों को आनंदित करना आरंभ किया होगा, तब लोगों ने ऐसी ही अन्य स्वर लहरियों के लिए सोचना और प्रयास करना आरंभ किया होगा। परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्र संगीत की दुनिया से जुड़ते चले गए। वाद्य उन्हें कहते हैं, जिनका वादन किया जा सके, जिन्हें बजाया जा सके। तेरहवीं शताब्दी के महान ग्रंथकार आचार्य शार्ङ्गदेव ने अपने ग्रंथ *संगीत रत्नाकर* में इन वाद्यों का चार भागों में वर्गीकरण, इनकी वादन विधि आदि को ध्यान में रखते हुए किया जो इस प्रकार है—

तत् अर्थात तंत्री वाद्य— इस श्रेणी के वाद्य स्वर प्रधान होते हैं। इसमें स्वरोत्पत्ति तंतु अथवा तार के आंदोलन द्वारा होती है। इन वाद्यों में लगे तारों को मिजराब अथवा जवा से आंदोलित करके स्वरोत्पत्ति की जाती है, जैसे— वीणा के कई प्रकार, सुरबहार, सितार, सरोद, तानपूरा गिटार, मैंडोलिन आदि। कुछ वाद्यों को बजाने के लिए गज या छड़ी (Bow) का भी प्रयोग किया जाता है, जैसे— सारंगी, इसराज, दिलरूबा वॉयलिन, चेलो, तार, शहनाई आदि।

सुषिर वाद्य— सुषिर वाद्य भी स्वर वाद्यों का ही प्रकार है, किंतु इसमें वायु के आंदोलन द्वारा स्वरोत्पत्ति की जाती है, जैसे— बाँसुरी, शहनाई, हारमोनियम, आर्गन तथा एकार्डियन आदि।

घन वाद्य— घन वाद्य मूलत: लय प्रधान होते हैं। इनका निर्माण कांस्य, ताँबा, पीतल अथवा लौह आदि धातुओं द्वारा होता है। घटम्, मंजीरा, झांझ करताल, घंटे, घुँघरू आदि घन वाद्यों की ही श्रेणी में आते हैं। इनके माध्यम से लय का निर्वहन किया जाता है।

© NCERT not to be republished

अवनद्ध वाद्य— अवनद्ध वाद्य मुख्यत: लय और ताल प्रधान होते हैं। इसमें किसी धातु, लकड़ी या मिट्टी से निर्मित ढाँचे पर चर्म आच्छादित करके किसी लकड़ी या हाथ से प्रहार करके आवाज़ उत्पन्न की जाती है। पखावज, मृदंगम्, घटम्, ढोलक, नक्कारा, नाल, खोल, पुंग, ड्रम आदि अवनद्ध श्रेणी के ही वाद्य हैं।

भारतीय वाद्यों के वर्गीकरण की चर्चा करते समय हमें इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि संगीत एक सृजनात्मक कला है, अत: इसमें समय-समय पर परिवर्तन भी होते रहते हैं। आज हमारे संगीत में जलतरंग, नलतरंग, काष्ठतरंग जैसे नवनिर्मित वाद्यों सहित संतूर आदि भी शामिल हो गए हैं, जो वास्तव में मूलत: स्वर वाद्य हैं, लेकिन इनकी वादन विधि घन वाद्यों जैसी है। अत: संभव है कि निकट भविष्य में वाद्यों का कोई पाँचवाँ प्रकार भी शामिल हो जाए। इस बात का उल्लेख करना भी आवश्यक है कि पहले घन वाद्यों द्वारा ही संगीत की पूरी संगति की जाती थी और अवनद्ध वाद्य सिर्फ़ लय और ताल का निर्वहन करते थे जबकि आज घन वाद्य सिर्फ़ ग्रामीण अंचल के लोक संगीत और भजन-कीर्तन तक सिमटकर रह गए हैं। आज शास्त्रीय, उपशास्त्रीय तथा सुगम संगीत की संगति के लिए कलाकारों की पहली पसंद अवनद्ध वाद्य ही होते हैं।

आइए, एक संक्षिप्त दृष्टि अवनद्ध वाद्यों की विकास यात्रा पर भी डालते हैं। प्राचीन काल में अवनद्ध वाद्य के रूप में भू-दुंदुभि नामक वाद्य का उल्लेख प्राप्त होता है। ज़मीन पर फैले चमड़े की परतों पर वृक्ष से गिरते पत्तों और टहनियों के कारण एक विशेष प्रकार की ध्वनि ने मानव को एक वाद्य के निर्माण की प्रेरणा दी। अत: उसने ज़मीन में गड्डा खोदकर उसके मुख पर चर्म आच्छादित कर भू-दुंदुभि नामक वाद्य का निर्माण किया और उसे किसी मृत पशु की पूंछ या लकड़ी से बजाकर दूर-दूर तक बसे लोगों तक उसकी आवाज़ पहुँचाने लगा। बाद में छोटे आकार के मिट्टी के ढाँचे पर चर्म आच्छादित करके मनुष्य उसे भी बजाने लगा। इस वाद्य को दुंदुभि कहा गया। बाद में दुंदुभि का ढाँचा लकड़ी का बना और उसका मुख परिपक्व चर्म से बना तथा इसके मुख को चारों ओर से चर्म की बद्धियों से बद्ध किया गया। बद्धियों को मुलायम रखने के लिए उस पर तेल लगाया जाता था।

उल्लेखनीय है कि तब अवनद्ध वाद्यों से एक ही तरह की ध्वनि निकलती थी और वे एक ही स्वर में बोलते थे। इस स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन पुष्कर नामक वाद्य के आविष्कार के बाद हुआ, जिसका वर्णन आचार्य भरत मुनि ने अपने ग्रंथ *नाट्यशास्त्र* में किया है। पुष्कर, तीन वाद्यों का समूह होने के कारण त्रिपुष्कर और पुष्करत्रयी भी कहलाता था। वह प्रथम वाद्य था जिसमें नदी किनारे की

चित्र ई— कला उत्सव में लोक वाद्य बजाते हुए कलाकार

© NCERT not to be republished

श्यामा मिट्टी लगाकर उसकी गूँज को कम और अधिक करने तथा इच्छित स्वर में मिलाने की व्यवस्था की गई थी और उँगलियों से वादन के कारण जिसमें विभिन्न प्रकार के वर्णों का वादन संभव हो पाया था। भरत के अनुसार लगभग सौ प्रचलित अवनद्ध वाद्यों में से मात्र त्रिपुष्कर को ही मुख्य वाद्य माना जाता था। प्रस्तर शिल्पों में त्रिपुष्कर वादन का चित्रण ईसा की दूसरी शताब्दी पूर्व से बाद की नौवीं शताब्दी तक मिलता है। आज के लोकप्रिय अवनद्ध वाद्य पखावज और तबला, उसी त्रिपुष्कर के दो भिन्न रूप हैं। त्रिपुष्कर का एक भाग आंकिक आज मृदंग और पखावज के नाम से लोकप्रिय है, तो दूसरा भाग ऊध्वर्क जो सव्यक और वामक नामक दो वाद्यों का समूह था, आज तबला और बायाँ नाम से जाना जाता है। चूँकि तब ऐसे वाद्य मिट्टी के बनते थे, अत: उन्हें मृदंग भी कहा जाता था।

चित्र उ— ओडिशा का लोक कलाकार

वाद्य वादन की परंपरा भारत में आरंभ से ही अत्यंत उन्नत अवस्था में रही। वाल्मिकी रामायण में तालयुक्त रामचरित गान के पाठ को संस्कृत लक्षण संपन्न कहा गया। राम के वन गमन और दशरथ के निधन से अनभिज्ञ भरत जब अपने मामा के यहाँ से अयोध्या लौट रहे थे तब मृदंग एवं अन्य वाद्यों को मौन देखकर एक निश्चित अमंगल की आशंका उनके हृदय में उत्पन्न हुई थी। *मार्कंडेय पुराण* में ताल क्रियाओं के विवेचन के साथ-साथ वाद्यों और उनके प्रकारों पर भी प्रकाश डाला गया है।

छांदोग्य उपनिषद में गीत, वाद्य एवं नृत्य तीनों का उल्लेख हुआ है। मौर्यकाल में भी संगीत अत्यंत उन्नत अवस्था में था। वात्स्यायन मुनि ने 64 कलाओं में वादन को दूसरा स्थान दिया है। उनके समय में नारियों को भी संगीत अध्ययन की पूर्ण स्वाधीनता थी। बौद्ध धर्म में भी संगीत को महत्वपूर्ण स्थान मिला है। वेपुल्य सूत्र के अनुसार— 'कुमार सिद्धार्थ (गौतम बुद्ध) के मनोरंजन हेतु उनके पिता राजा शुद्धोदन ने सहस्त्र वाद्य यंत्रों की व्यवस्था की थी, जिनमें एक हज़ार छोटे मृदंग, एक हज़ार करताल और हज़ारों दूसरे वाद्य थे जिनका दिन, रात विविध वृंद-वादनों एवं गायन की संगति हेतु प्रयोग करके सिद्धार्थ के उदास मन को बहलाने का प्रयास किया जाता था।' आम्रपाली जैसी अद्वितीय नृत्यांगना इसी समय हुई थी। महाकवि कालिदास के समय में मार्ग संगीत का प्रचार कम होने लगा था और देशी संगीत का अध्ययन तथा प्रचार-प्रसार बढ़ने लगा। जाति राग एवं ग्राम रागों के अवशेष उस काल में केवल वैदिक अनुष्ठानों तक ही सीमित रह गए थे। मृदंग जैसे चर्म अवनद्ध वाद्यों का लय निर्वहन हेतु प्रयोग होता था। इस काल की महिलाएँ भी मृदंग वादन में निपुण होती थीं।

© NCERT not to be republished

मार्गी और देशी संगीत की चर्चा करते हुए मार्ग और देशी तालों पर भी एक दृष्टि डाल लेते हैं। भरत मुनि ने अपने ग्रंथ *नाट्यशास्त्र* में पाँच मार्ग तालों का उल्लेख किया है— 1. चच्चत्पुट, 2. चाचपुट, 3. षट्पिता पुत्रक, 4. संपेक्वेष्टिका और 5. उद्घट।

तेरहवीं शताब्दी के महान ग्रंथकार आचार्य शार्ङ्गदेव ने अपनी पुस्तक *संगीत रत्नाकर* में 120 देशी तालों का विवरण दिया है। लेकिन तेरहवीं शताब्दी से आज की इक्कीसवीं शताब्दी तक न केवल समय बहुत बदल गया है, बल्कि संगीत और संगीतशास्त्र में भी काफी बदलाव आ चुके हैं। *संगीत रत्नाकर* में 1 मात्रा, 2 मात्रा, 2½ मात्रा के तालों से लेकर 21 मात्रा तक के 120 देशी तालों का उल्लेख हुआ है। वर्तमान में इनके नाम बदल गए हैं। कुछ ताल तो प्रचलन में भी नहीं हैं। शार्ङ्गदेव ने भारत भ्रमण करके अलग-अलग तरह के संगीत के साथ प्रचलित तालों का संग्रह करके अपनी पुस्तक में लिखा है। लेकिन अगर आज उत्तर भारतीय संगीत के संदर्भ में देखें तो 1 मात्रा, 2 मात्रा और 2½ मात्रा के तालों का कोई औचित्य नहीं प्रतीत होता है। आज के संदर्भ में तो इन्हें लय प्रकार कहना ही उचित होगा। उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित तालों पर दृष्टि डालते हैं तो सबसे छोटी ताल के रूप में 6 मात्रा की दादरा और सबसे बड़ी ताल के रूप में 28 मात्रा की ब्रह्म ताल प्रचलित है। जिस तरह से सिर्फ़ दो या तीन स्वरों के प्रयोग से धुनें बनती हैं, राग नहीं, उसी तरह से सिर्फ़ दो या तीन मात्राओं के प्रयोग से लयाकृति बनती है, ताल नहीं। चूँकि उत्तर भारतीय संगीत में तालों पर काफी सूक्ष्म दृष्टि से और विस्तारपूर्वक काम हुआ है, इसलिए इस संगीत शैली में अलग-अलग गीत प्रकारों के लिए भी और अलग-अलग लय में बजाने के लिए भी तालों की रचना हुई है। इसलिए यहाँ समान मात्राओं की कई तालें भी प्रचलित हैं, जैसे— 14 मात्रा में दीपचंदी, झूमरा, आड़ा चारताल और धमार तथा 16 मात्रा में त्रिताल, तिलवाड़ा, जत और अद्धापंजाबी आदि। उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित तालों के ठेकों में कश्मीर से कन्याकुमारी तक एकरूपता पाई जाती है, जबकि अन्य संगीत शैलियों में ऐसा नहीं है। ठेका उत्तर भारतीय संगीत की विशेषता है।

भारतीय संगीत के इतिहास का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि प्राग्वैदिक काल में जब भाषा, बोली और शब्द का जन्म नहीं हुआ था, तब भी आदिमानव अपने कंठ से अहा, हाहा, हूहू, ओह, हाउ, हे आदि ध्वनियों को निकालकर अपना अभिप्राय प्रकट करता था। इन ध्वनियों को बाद में स्तोभ और इंटरजेक्शनल क्राई (Interjectional Cry) कहा गया। ऐसा विश्वास है कि आदिमानव ने अपना पहला गान शब्दों के अभाव में इन्हीं स्तोभों के माध्यम से गाया होगा। प्राग्वैदिक युग की खुदाई में बाँसुरी, तंत्रवाद्य वीणा तथा चमड़े से बने वाद्य यंत्रों का प्रयोग होता था। जानवरों के सींग से बने फूँक से बजने वाले श्रृंग जैसे सुषिर वाद्य भी उस

चित्र ऊ— गीत वाद्य की प्रस्तुति

© NCERT not to be republished

चित्र ए— राजस्थान का लोक संगीत प्रस्तुत करते हुए कलाकार

समय प्रचलित थे। जबकि वैदिक काल में संगीत उन्नत अवस्था में था। यद्यपि इस काल में संगीत के स्वतंत्र ग्रंथ नहीं लिखे गए, तथापि गीत, वाद्य और नृत्य के यथेष्ट उल्लेख मिलते हैं। *ऋग्वेद*, *यजुर्वेद*, *सामवेद* और *अथर्ववेद* के साथ-साथ चारों वेदों की चार संहिताओं में, वेदों की व्याख्या करने वाले ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद आदि ग्रंथों सहित शिक्षा ग्रंथ तथा प्रतिशाख्य जैसे ग्रंथों में संगीत के विषय में प्रचुर सामग्री उपलब्ध है। वैदिक काल में ही संगीतोपयोगी ध्वनि के लिए नाद शब्द का प्रयोग शुरू हुआ और उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित स्वरों के आधार पर क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मंद्र और अतिस्वार्य नामक सात स्वर स्थापित हुए जिन्हें बाद में षड्ज, ऋषभ गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद कहा गया। उदात्त से गांधार और निषाद, अनुदात्त से ऋषभ और धैवत तथा स्वरित से षड्ज, मध्यम और पंचम स्वर विकसित हुए। सर्वप्रथम नारदीय शिक्षा में सा रे ग म प ध और नि नामों का उल्लेख हुआ है। वीणा के लिए वाण और बाण संज्ञा का प्रयोग होता था। वीणा शब्द का प्रथम प्रयोग *यजुर्वेद* में हुआ। भूमि दुंदुभि और गर्गर जैसे अवनद्ध वाद्यों का वादन हिरण के सींग से होता था। तूणव, बाकर और नाली नामक सुषिर वाद्य भी उस समय प्रचलित थे।

अठारह पुराणों में से *वायु पुराण, मार्कंडेय पुराण* और *विष्णु पुराण* में संगीत का उल्लेख मिलता है। विष्णु पुराण में ही भगवान विष्णु का यह मशहूर कथन है— "नाहं वसामि बैकुंठे योगिनां हृदये न च। मद्भक्ता यत्र गायंति तंत्र तिष्ठामि: नारद:।"

इन पुराणों में 'स्वरमंडल' नामक एक शब्द का उल्लेख मिलता है, जिसका अभिप्राय सातों स्वर, षड्ज ग्राम, गांधार ग्राम और मध्यम ग्राम जैसे तीनों ग्राम और 49 तानों का समावेश होता था। निबद्ध, अनिबद्ध, अताल और सताल जैसे चार प्रकार के पदों का उल्लेख मिलता है। तब वाद्यों को आतोद्य कहा जाता था और तत्, अवनद्ध, घन तथा सुषिर जैसे इनके चार प्रकार प्रचलित थे। चतस्त्र, तिस्त्र मिश्र और खंड जैसे चार प्रकार के ताल और विलंबित, मध्य तथा द्रुत जैसे तीन प्रकार के लय मान्य थे।

रामायण के प्रमुख पात्र राम और रावण दोनों ही संगीत अनुरागी थे, इसलिए अयोध्या और लंका दोनों में ही संगीत का अनवरत प्रयोग होता रहता था। आदि कवि वाल्मीकि तथा गोस्वामी तुलसीदास दोनों की ही कृतियों में संगीत का प्रचुर उल्लेख हुआ है। रामायण काल में द्वितंत्री नकुली वीणा, त्रितंत्री वीणा, सप्ततंत्री चित्र वीणा और नौतंत्री विपंची वीणा, जैसे तंत्र वाद्य, वेणु,

© NCERT not to be republished

शंख और वंश, जैसे सुषिर वाद्य, दुंदुभि, भेरी, पणव, डिंडिम, मुरज, मृदंग और आडम्बर जैसे अवनद्ध वाद्य तथा कांस्य निर्मित जैसे घन वाद्य प्रचलित थे। राक्षसराज रावण संगीत का ज्ञाता था, उसके राज्य की महिलाएँ भी संगीत नृत्य प्रवीण थीं। इस काल में संगीत मानव जीवन का एक अभिन्न अंग था और राम की अयोध्या, रावण की लंका तथा सुग्रीव के किष्किंधा पर्वत सहित महर्षि वाल्मीकि के आश्रम तक इसकी लोकप्रियता यथावत थी। इस काल में शुद्ध जातियों का ही प्रयोग होता था। कोई स्वर कम नहीं किया जाता था। राम के पुत्र द्वय कुश और लव के द्वारा, रामायण गान का उल्लेख मिलता है।

महाभारत काल में भी संगीत की लोकप्रियता चरम सीमा पर थी। कृष्ण जैसे अद्वितीय बाँसुरी वादक और महान नर्तक इसी काल खंड में हुए थे। इस काल में संगीत के लिए गांधर्व शब्द का प्रयोग होता था। तुम्बरू जैसे श्रेष्ठ ऋषि गंधर्व इसी समय हुए थे। कहा जाता है कि तंबूरा का निर्माण उन्होंने ही किया था, जिसके आधार पर आधुनिक तानपूरा भी विकसित हुआ है। महाभारत के आदिपर्व में कंबल, अश्वतर और नारद जैसे गंधर्वों का भी उल्लेख हुआ है, जो कच्छपी वीणा बजाते थे। धनुर्धर अर्जुन ने चित्रसेन से गायन, वादन और नर्तन की शिक्षा प्राप्त करके, अज्ञातवास के समय बृहन्नला के रूप में विराट नरेश की सुपुत्री उत्तरा को इसकी शिक्षा दी थी। वे वीणा पर गायन करते थे। अभिजात्य वर्ग के संगीतकारों को गंधर्व कहा जाता था। इनके अलावा मंगलगाथा और स्तुति आदि गाने वाले व्यवसायी गायकों को नट, सूत, बंदी, मागध और वैतालिक कहा जाता था। समाज में संगीत और संगीतकारों का सम्मान था और बालिकाओं को संगीत सिखाने के लिए संगीतशालाएँ भी थीं। वाद्य के चारों प्रकार प्रचलित थे जिनमें शंख, भेरी, तूर्य, वारिज और कांस्य के घन वाद्य अधिक लोकप्रिय थे।

मौर्य काल में संगीत में मनोरंजन का स्थान काफी बढ़ गया था। इसलिए इसके नैतिक और मर्यादित रूप में कुछ-कुछ गिरावट आने लगी थी। धनाड्य व्यक्तियों द्वारा मनोरंजन के लिए निजी संगीत गोष्टियों का प्रचलन शुरू हो गया था। महिलाओं के लिए संगीत-नृत्य का आरंभिक ज्ञान आवश्यक माना जाने लगा था। संध्याकालीन मनोरंजन के लिए गणिकाओं के यहाँ जाने और उन्हें अपने यहाँ बुलाने का सिलसिला बढ़ने लगा था। इस काल में संगीत प्रशिक्षण केंद्र भी थे। सैल्यूकस की संगीतज्ञा पुत्री का विवाह चंद्रगुप्त मौर्य से हो जाने के कारण यूनानी संगीत पहली बार भारत आया तो भारतीय संगीत भी यूनान जा पहुँचा। सम्राट अशोक की पत्नी तिष्यरक्षिता की प्रमुख परिचारिका चारूमित्रा प्रवीण वीणा वादिका थी। अशोक ने जब बौद्ध धर्म का विश्वव्यापी प्रचार-प्रसार आरंभ किया तो बौद्ध धर्म के साथ-साथ भारतीय संगीत का भी तिब्बत, चीन, मिस्र, यूनान, जावा, सुमात्रा, कम्बोडिया, बर्मा और श्रीलंका आदि देशों के साथ आदान-प्रदान शुरू हो गया था।

इसी समय के आस-पास ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से ईसा की चौथी शताब्दी के मध्य आचार्य भरत मुनि ने *नाट्यशास्त्र* जैसी एक अनुपम ग्रंथ की रचना की जो आज लगभग दो हज़ार वर्षों बाद भी भारतीय नाट्य, गायन, वादन और नृत्य का आधार ग्रंथ बना हुआ है। यद्यपि भरत मुनि

© NCERT not to be republished

ने नाट्य के संदर्भ में गायन, वादन और नृत्य की चर्चा की है, तथापि यह ग्रंथ आज भी अपनी प्रामाणिकता सिद्ध करते हुए कला का मार्गदर्शन कर रहा है। कनिष्क और गुप्तकाल में यूँ तो संगीत के क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं हुआ, किंतु दत्तिल मुनि का ग्रंथ *दत्तिलम* इसी काल की विशेष देन है। समुद्र गुप्त प्रवीण वीणा वादक थे। उस काल के सिक्कों पर उनका वीणा वादन करता हुआ चित्र अंकित है। राजा के संगीतानुरागी होने का स्वाभाविक लाभ संगीत को मिला और वह खूब फला-फूला। समुद्रगुप्त के बाद उनके सुपुत्र चंद्रगुप्त द्वितीय सिंहासन पर बैठे जो बाद में विक्रमादित्य के नाम से विख्यात हुए और जिनके दरबार के नौ रत्नों में महाकवि कालिदास जैसे अमूल्य रत्न भी थे। कालिदास कृत काव्य रचनाओं में संगीत का उल्लेख प्रचुर मात्रा में हुआ है। कुछ लोगों का मत है कि उस समय भारतीय संगीत का प्रचार-प्रसार रोम, फ्रांस, इंग्लैंड, आयरलैंड और हंगरी आदि देशों तक हो चुका था। हर्षवर्धन और उनकी बहन राजश्री ने भी संगीत के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया था। सातवीं शताब्दी में मतंग मुनि रचित *बृहद्देशी* नामक एक महत्वपूर्ण ग्रंथ संगीत जगत को मिला।

इसके बाद मंथर गति से संगीत की यात्रा आगे बढ़ती तो रही, किंतु सोने की चिड़िया कहे जाने वाले इस शांति प्रिय देश की समृद्धि भी विदेशियों की आँखों में खटकती रही, अत: भारत पर विदेशियों के आक्रमणों का सिलसिला शुरू हो गया। महमूद गजनवी, मोहम्मद ग़ौरी, अलाउद्दीन खिलजी, नादिर शाह और तैमूर लंग जैसे विदेशी आक्रांता भारत पर आक्रमण करते रहे। यहाँ की धन-संपदा को लूटने के साथ-साथ यहाँ के महत्वपूर्ण ग्रंथों और शिक्षण संस्थाओं को नुकसान पहुँचाते रहे।

तेरहवीं शताब्दी में संगीत के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण कार्य हुए। एक ओर तो आचार्य शार्ङ्गदेव ने *संगीत रत्नाकर* जैसे अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रंथ की रचना की तो दूसरी ओर अलाउद्दीन खिलजी के दरबारी कवि और हज़रत निज़ामुद्दीन के शिष्य हज़रत अमीर खुसरो ने कव्वाली और तराना जैसी गीत शैली की शानदार शुरुआत की, तो गोपाल नायक ने प्रबंध गायन के क्षेत्र में अपनी दक्षता सिद्ध की।

आचार्य शार्ङ्गदेव ने अपने ग्रंथ में मार्गी संगीत के साथ-साथ देशी संगीत के विषय में भी विस्तार से लिखा है। भरत मुनि कृत *नाट्यशास्त्र* और शार्ङ्गदेव कृत *संगीत रत्नाकर* ही दो ऐसे ग्रंथ हैं जो उत्तर और दक्षिण दोनों के ही संगीतकारों द्वारा आज भी सर्वाधिक प्रामाणिक माने जाते हैं। 'गीत वाद्य' तथा 'नृत्यं त्रयम संगीत मुच्यते' लिखकर संगीत को परिभाषित करने वाले शार्ङ्गदेव ने अपने इस ग्रंथ के सात अध्यायों में गुण धर्म के आधार पर नाद के पाँच प्रकारों— पुष्ट, अपुष्ट, सूक्ष्म, अतिसूक्ष्म और कृत्रिम पर प्रकाश डाला है। आज पाश्चात्य संगीत में नाद के जो पाँच प्रकार वाल्त्ज़, बास्स टेनर, आल्टो, सोप्रेनो और फाल्सेटो बताए जाते हैं, उनका संपूर्ण विवरण शार्ङ्गदेव ने तेरहवीं शताब्दी में ही दे दिया था। इसके अतिरिक्त सारणा चतुष्टयी, ग्राम, मूर्च्छना, तान निरूपण, वर्ण, अलंकार, शुद्ध और विकृत स्वरों का भी निरूपण किया गया है। उन्होंने सात शुद्ध और 12 विकृत यानी कुल 19 स्वरों को मान्यता दी थी। वादी, संवादी, अनुवादी और विवादी

© NCERT not to be republished

चार प्रकार के स्वरों को मान्यता देकर 22 श्रुतियों और सारणा चतुष्टयी की भी व्याख्या की है। 264 रागों का उल्लेख करते हुए उन्होंने ग्राम राग, राग, उप राग, भाषा राग, अंतरभाषा राग, विभाषा राग, रागांग राग, भाषांग राग, क्रियांग राग तथा उपांग रागों के रूप में वर्गीकृत करते हुए 'दशविध राग वर्गीकरण' को परिभाषित किया है। प्रबंध अध्याय में अनिबद्ध और निबद्ध गान तथा 75 प्रकार के प्रबंधों का उल्लेख हुआ है। तालाध्याय में मार्गी और देशी तालों का विस्तृत विवरण है। वाद्य अध्याय में वाद्यों के चार प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है तो अंतिम अध्याय में नृत्त, नृत्य और नाट्य के विषय में विस्तार से लिखा गया है।

चौदहवीं शताब्दी में भारत में प्रचलित लोक शैली के गायन 'ख्याल' को अभिजात्य संगीत का स्पर्श देकर शास्त्रीय संगीत में ढालने का प्रयास जौनपुर के सुल्तान हुसैन शर्की ने जौनपुर (उत्तर प्रदेश) में शुरू किया। इन्हें ही जौनपुरी राग का सर्जक कहा जाता है। एक ओर यह हो रहा था, तो दूसरी ओर संत संगीतज्ञ स्वामी हरिदास प्रबंध और विष्णुपद के गायन के आधार पर ब्रजभाषा में रचित ध्रुवपद गायन की नींव डाल रहे थे, जिन्हें बाद में उनके सुशिष्य नायक बैजनाथ उर्फ बैजू बावरा ने ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर के संरक्षण में आगे बढ़ाया। मानसिंह तोमर के समय में संगीत का पर्याप्त विकास हुआ। ध्रुवपद जैसी गायकी को शास्त्रीयता से सुसज्जित करके राज दरबारों में प्रतिष्ठित करने का प्रथम श्रेय इनके राज गायक नायक बैजनाथ उर्फ बैजू बावरा को है। ग्वालियर में मानसिंह तोमर के संरक्षण में एक संगीत विद्यालय भी चलता था। उनकी गूर्जरी रानी (मृगनैनी) के नाम पर राग गूर्जरी तोड़ी का आविष्कार भी इसी समय हुआ और इसी समय *मान कुतूहल* जैसा महत्वपूर्ण सांगीतिक ग्रंथ भी लिखा गया। तेरहवीं शताब्दी से भारत में मुगलों की सत्ता स्थापित होने लगी थी। उनके आक्रमणों का मुख्य केंद्र उत्तर भारत ही था। अत: उनके संपर्क में आने के कारण उत्तर भारतीय संगीत में परिवर्तनों का सिलसिला आरंभ हो गया था, जबकि दक्षिण भारतीय संगीत इससे अस्पर्शित रहा। अत: उत्तर भारतीय संगीत और दक्षिण भारतीय संगीत के बीच एक विभाजक रेखा खींचने लगी थी जिसे आज हम स्पष्ट तौर पर देख पा रहे हैं।

तेरहवीं से अठारहवीं शताब्दी तक के काल को मध्यकाल के नाम से जाना जाता है। इसमें पंद्रहवीं से सोलहवीं शताब्दी में भक्तकवियों व भक्तसंगीतज्ञों की बहुलता के कारण इसे भक्तिकाल भी कहा जाता है। उन्नीसवीं से बीसवीं शताब्दी के साथ ही आधुनिक काल आरंभ हो जाता है। आज इक्कीसवीं शताब्दी में जो संगीत प्रचलित है, चाहे वह ख्याल हो, तराना हो, कव्वाली और गज़ल हो या ठुमरी और टप्पा, वे सब इसी काल खंड में शनै:शनै: विकसित हुए हैं और इनके आविष्कार का श्रेय किसी एक व्यक्ति को नहीं दिया जा सकता है, क्योंकि इनकी जड़ें इसी भारत की धरती में काफी पहले से समाई हुई थीं। उस्ताद गुलाम रसूल से नवाब वाज़िद अली शाह तक ने

चित्र ऐ— गिरिजा देवी– हिंदुस्तानी शास्त्रीय गायन प्रस्तुत करते हुए

© NCERT not to be republished

चित्र ओ— नाट्य संगीत प्रस्तुत करते हुए कलाकार

ठुमरी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी तो उस्ताद गुलाम नबी शोरी ने टप्पा के प्रचार-प्रसार में। इसी तरह सुल्तान हुसैन शर्की से लेकर सदारंग-अदारंग तक ने ख्याल गायन के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया था और इन सबको अपनी विकास यात्रा तय करने में लगभग 400 वर्षों का (चौदहवीं से अठारहवीं शताब्दी तक का) समय लगा था।

भक्तिकाल में जितने भी भक्त कवि हुए वे सभी संगीत के भी बहुत अच्छे ज्ञाता थे और उनकी उस समय की लिखी हुई रचनाओं के आधार पर आज भी संगीत की प्रामाणिकता सिद्ध की जा रही है। इनमें स्वामी हरिदास, वल्लभाचार्य, सूरदास, तुलसीदास, चैतन्य महाप्रभू, कुम्भनदास, नरसिंह दास, छीतस्वामी, परमानंद दास, गोविंद स्वामी, मीरा बाई, गुरूनानक देव और निम्बार्काचार्य आदि जैसे कई नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

लगभग सभी मुगल बादशाह संगीत प्रेमी थे, अत: उनके प्रोत्साहन से संगीत की विकास यात्रा निरंतर चलती रही। बाबर के दरबार में शैखी नाई, कुले मुहम्मद ऊदी, गुलाम सादी और शाह कुली जैसे संगीतज्ञ थे तो हुमायूँ के दरबार में मीर कलंद, कासिम, कोचक, मुखालिस, हाफिज़ सुल्तान रख्ता, ख्वाजा कमालुद्दीन हुसैन एवं हाफिर मुहैरी आदि जैसे संगीतज्ञ थे। कुछ इतिहासकारों के मतानुसार 1535 में बहादुर शाह गुजराती को परास्त करने के लिए हुमायूँ को काफी नुकसान उठाना पड़ा था, अत: उसने क्रोधावेश में एक लाख बंदियों को कत्ल करने का आदेश दे दिया था। उन्हीं बंदियों में बहादुर शाह गुजराती के राज गायक नायक बैजू भी थे। उन्होंने एक फ़ारसी गज़ल सुनाकर हुमायूँ का दिल जीता था और ईनाम में सभी बंदियों को जीवन दान दिलवाया था। मुगल सम्राट अकबर के दरबार के नौ रत्नों में तानसेन जैसे महान गायक थे। इसी समय ध्रुवपद की गायकी चार भागों में विभक्त हुई और गौड़हार वाणी, डागुर वाणी, खंडार वाणी और नौहार वाणी जैसी इसकी चार शाखाएँ बन गईं। तानसेन, रामदास, सुब्हान खाँ, सुरजन (सुरज्ञान) खाँ, मियाँ चाँद, विचित्र खाँ, मुहम्मद खाँ ढारी, वीरमंडल खाँ, बाज़ बहादुर, सरोद खाँ, मियाँ लाल, शाहाब अथवा शिहाप खाँ, दाउद खाँ ढारी, तानतरंग खाँ, मुल्ला इस्हाक, नायक चरजू, प्रवीन खाँ, सूरदास (गायक), चाँद खाँ, रंगसेन, शेख दावन ढारी, रहमतुल्लाह, उस्ताद मुहम्मद, मीर सैयद अली, उस्ताद यूसूफ, कासिम, ताशबेग, सुलतान हाफ़िज़ हुसैन, बहराम कुली खाँ, सुलतान हाशिम, उस्ताद शाह मुहम्मद, मुहम्मद अमीन, हाफ़िज़ ख्वाजा अली, मीर अब्दुल्लाह, पीरज़ाद, मुहम्मद हुसैन, सूरज खाँ, नायक भगवान, विलास खाँ, मदन खाँ, नबात खाँ, हसन खाँ, सूरत सेन, लाल देवी, ब्रम्ही और आकिल जैसे संगीतज्ञ अकबर के दरबार में थे। अकबर के विषय में कहा जाता है कि उन्हें संगीत के शास्त्र और क्रिया दोनों पक्षों का अच्छा ज्ञान था। तानसेन और

© NCERT not to be republished

बैजू बावरा की ऐतिहासिक संगीत प्रतियोगिता भी अकबर के ही दरबार में हुई थी जिसमें तानसेन पराजित हुए थे। तानसेन द्वारा प्रचारित दरबारी कान्हड़ा, मियाँ की तोड़ी और मियां मल्हार, चरजू उर्फ पंडित चरण दास रचित चरजू की मल्हार, पंडित रामदास द्वारा रचित रामदासी मल्हार तथा पंडित सूरदास रचित सूरदासी मल्हार आज भी लोकप्रिय हैं।

रागमाला में संकलित एक ध्रुवपद के अनुसार अकबर का बेटा जहाँगीर भी संगीत का ज्ञाता होने के कारण भरत के मत पर विचार करने वाला, सप्ताध्यायी अर्थात *संगीत रत्नाकर* से सुपरिचित, संगीत के अंग-अंग में सयाना और गुणग्राहक था। इन्हें ध्रुवपद, गज़ल और कव्वाली समान रूप से प्रिय थे। इनके दरबारी संगीतज्ञों में विलास खाँ, छतर खाँ, खुर्रमदाद, मक्खू ,परवेज़दाद, इमज़ान, शौकी, हमज़ान और उस्ताद मोहम्मद खाँ के नाम उल्लेखनीय हैं। गज़ल और कव्वाल गायक 'शौकी' को जहाँगीर ने आनंद खाँ की उपाधि से सम्मानित किया था। उस्ताद मोहम्मद ने जहाँगीर की मुद्रा से अंकित कुछ गज़लों की रचना की थी, जिससे खुश होकर जहाँगीर ने उन्हें रुपयों से तुलवाया था और हौदा सहित एक हाथी देकर सम्मानित किया था। बख्तर खाँ कलावंत को भी दस हज़ार रुपये और एक मुक्तामाला देकर जहाँगीर ने पुरस्कृत किया था। जहाँगीर की पत्नी नूरजहाँ भी कला, काव्य और संगीत अनुरागी थी। शाहजहाँ के काल में संगीत में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इस काल में यद्यपि संगीत का प्रचार-प्रसार होता रहा, लेकिन संगीत मनोरंजन का मुख्य उद्देश्य बनने लगा था। शास्त्र पक्ष गौण पड़ने लगा था और चमत्कारों पर विशेष ज़ोर दिया जाने लगा था। संगीत में व्यावसायिकता की भावना ज़ोर पकड़ने लगी थी। शाहजहाँ के दरबारी संगीतकारों में तानसेन के पुत्र विलास खाँ के दामाद लाल खाँ, खुशहाल खाँ, बहराम खाँ, रंग खाँ कलावंत, किशन खाँ कलावंत और जगन्नाथ कविराय आदि प्रमुख थे। शाहजहाँ के समय में विभिन्न स्तरीय संगीत प्रतियोगिताएँ भी होती थीं और शाहजहाँ— हिंदू और मुसलमान दोनों धर्मों के संगीतकारों को समान सम्मान देते थे। माना जाता है कि शाहजहाँ के दरबारी संगीतज्ञ नायक बख्शु ने *सहसरस* नामक एक पुस्तक लिखी थी जिसमें एक हज़ार ध्रुवपद संकलित हैं। कई लेखकों ने औरंगज़ेब को संगीत का शत्रु लिखा है, जबकि सच्चाई यह है कि औरंगज़ेब ने राजनैतिक कारणों से सिर्फ़ राज दरबार में संगीत पर प्रतिबंध लगाया था। उनके महल में संगीत की स्वर लहरियाँ गूँजा करती थीं। गायक खुशहाल खाँ को औरंगज़ेब ने गुण समुद्र खाँ की उपाधि से और कृपा राम पखावजी को मृदंग राय की उपाधि से सम्मानित किया था। *संगीत पारिजात* ग्रंथ के फ़ारसी अनुवादक रौशन ज़मीर और *मान कुतूहल* के फ़ारसी अनुवादक फकीरूल्लाह औरंगज़ेब के वेतन भोगी थे। औरंगज़ेब की शहज़ादी ज़ेब-उन-निसा को भी साहित्य और संगीत से प्रेम था।

सत्रहवीं शताब्दी में ही पंडित अहोबल की कृति *संगीत पारिजात* और पंडित व्यंकटमुखी की कृति *चतुर्दण्डिप्रकाशिका* का प्रकाशन हुआ था। औरंगज़ेब की मृत्यु 1707 में हुई और 1707 से 1718 तक कोई विशेष सांगीतिक घटना नहीं घटी। इस बीच बहादुर शाह प्रथम, ज़हाँदर शाह और फर्रूखसियर दिल्ली के तख्त पर रहे। 1719 में मुहम्मद शाह रंगीला गद्दी पर बैठे। सदारंग और अदारंग जैसे ध्रुवपद गायक इनके दरबार में थे, जिन्होंने हज़ारों ख्यालों की रचना करके उन्हें

© NCERT not to be republished

मुहम्मद शाह की मुद्रा से अंकित करके लोकप्रियता के शिखर तक पहुँचाया। इसी समय खुसरो खाँ ने अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे तब्ल अथवा तबल नामक अवनद्ध वाद्य में समयानुकूल और संगीतोचित सुधार कर तबला नाम से संगीत जगत में स्थापित किया। फलस्वरूप उन्हें उस्ताद सिद्धार खाँ का खिताब प्रदान किया गया। यहीं से तबले के दिल्ली घराने की तो शुरुआत हुई ही, संगीत के अन्य घरानों की भी नींव पड़ी। सितार का आविष्कार भी इसी समय माना जाता है। चौदहवीं-पंद्रहवीं शताब्दी से अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही ठुमरी का प्रथम उल्लेख फकीरूल्लाह कृत *राग दर्पण* में और मिर्जा खान कृत *तोहफतुल हिंद* ग्रंथ में हुआ है, जो सत्रहवीं शताब्दी में लिखे गए थे। बाद में जयपुर नरेश सवाई प्रताप सिंह कृत *श्रीराधा गोविंद संगीतसार* ग्रंथ में भी इसका उल्लेख हुआ है, जो अठारहवीं शताब्दी में लिखी गई थी। 1819 के आसपास पंडित राम सहाय ने लखनऊ के नवाब गाज़ीउद्दीन हैदर के दरबार में सात दिनों तक स्वतंत्र तबला वादन करके संगति वाद्य तबले की एक और विशेषता को साधिकार रेखांकित किया था।

इस तरह एक ओर संगीत की यात्रा चलती रही तो दूसरी ओर राजनैतिक उथल-पुथल भी मची रही। मुहम्मद शाह रंगीले के शासन काल में ही नादिर शाह का भीषण आक्रमण भारत पर हुआ, जिससे काफी नुकसान पहुँचा। इसके बहुत पहले मुगल सम्राट जहाँगीर के शासन काल में ही ईस्ट इंडिया कंपनी व्यापार करने के उद्देश्य से 1603 में ही भारत आकर धीरे-धीरे अपने पाँव पसारने लगी थी। भारत की राजनीतिक अस्थिरता देखकर अंग्रेजों ने यहाँ शासन करने का निर्णय लिया और 1773 में कोलकाता में अपनी राजधानी बनाते हुए वॉरेन हेस्टिंग्स को गवर्नर जनरल नियुक्त किया। अठारहवीं शताब्दी के इस काल खंड में छोटी-छोटी रियासतों और राजाओं, नवाबों के दरबारों में संगीत फलता-फूलता रहा।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में संगीत के क्षेत्र में दो महान विभूतियों के रूप में विष्णु द्वय का जन्म हुआ। 10 अगस्त 1860 में चतुर पंडित विष्णु नारायण भातखंडे और 18 अगस्त (श्रावण पूर्णिमा) 1872 में पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर का जन्म हुआ और संगीत के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव का सिलसिला शुरू हुआ। इन दोनों महान संगीतकारों ने घरानेदार संगीतकारों तक सिमटी कला को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास आरंभ किया और सार्वजनिक संगीत सभाओं का सिलसिला शुरू किया। इन्होंने संगीत विद्यालयों की स्थापना शुरू की और संगीत पुस्तकों का लेखन आरंभ किया। इन सुप्रयासों के कारण समाज के बुद्धिजीवी व संभ्रांत वर्ग के लोग भी संगीत में रुचि लेने लगे। यहाँ यह संकेत करना भी आवश्यक है कि मुस्लिम बादशाहों के साम्राज्य में भारतीय संगीत को दरबारी मनोरंजन का माध्यम माना जाने लगा था जिसके कारण उसका आध्यात्मिक प्रभाव लुप्त होता जा रहा था, परंतु विष्णु द्वय के सुप्रयासों से संगीत के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन आया और संगीत के कलात्मक पक्ष की गरिमा को पुन: सम्मान प्राप्त होने लगा।

भातखंडे जी उच्च शिक्षा प्राप्त बैरिस्टर थे। उन्होंने विभिन्न भाषाओं के सांगीतिक ग्रंथों का अध्ययन करके हिंदी और अंग्रेजी भाषा में उनका सहज-सरल रूपांतरण प्रकाशित करके आम

© NCERT not to be republished

लोगों को उपलब्ध कराया। भातखंडे जी ने एक अत्यंत सरल स्वरलिपि और ताल लिपि पद्धति का निर्माण करके वाचिक परंपरा से दी जा रही संगीत शिक्षा को लिखने की सुव्यवस्था की।

भातखंडे जी की पुस्तकों में लक्ष्य संगीत, हिंदुस्तानी संगीत पद्धति के 6 भाग, ए *शॉर्ट हिस्टॉरिकल सर्वे ऑफ द म्यूजिक ऑफ अपर इंडिया* ने लोगों के लिए चिंतन का नया द्वार खोला। भातखंडे जी ने *संगीत रत्नाकर*, *संगीत दर्पण*, *राग विबोध* एवं *संगीत पारिजात* जैसे ग्रंथों का संपादन और पुनर्प्रकाशन कराया। साथ ही, *अभिनव राग मंजरी*, *हृदय कौतुक* और *हृदय प्रकाश* जैसे अप्राप्य ग्रंथों का भी प्रकाशन कराया।

बचपन में ही अपनी नेत्र ज्योति खो चुके संगीतकार महर्षि पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर ने भी एक सूक्ष्म और वैज्ञानिक ताल लिपि और स्वरलिपि पद्धति का आविष्कार किया। पलुस्कर जी ने ख्याल गायन में प्रयुक्त अति शृंगारिक और अश्लील शब्दों के स्थान पर शालीन शब्दों के प्रयोग पर बल देते हुए *संगीत बाल बोध*, *राग प्रवेश*, *संगीत बाल प्रकाश*, *स्वल्पालाप गायन*, *संगीत तत्व दर्शक* और *भजनामृत लहरी* जैसी महत्वपूर्ण पुस्तकों का लेखन भी किया। ग्वालियर घराने के प्रतिष्ठित गायक पलुस्कर जी आज़ादी के पूर्व कांग्रेस के अधिवेशनों में जाकर वन्दे मातरम का गायन करते थे।

भारत में संगीत प्रशिक्षण केंद्रों का सिलसिला सैकड़ों वर्ष प्राचीन है, लेकिन प्राचीनकाल में प्रशिक्षण केंद्र आश्रमों व गुरूकुलों के रूप में होते थे जबकि पलुस्कर जी और भातखंडे जी ने इसे विद्यालयीन स्वरूप दिया। पलुस्कर जी ने वर्ष 1901 में अविभाजित भारत के लाहौर में आधुनिक युग के प्रथम संगीत विद्यालय— गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना की, जहाँ पंडित विनायक राव पटवर्धन, पंडित ओंकारनाथ ठाकुर, पंडित नारायण राव व्यास, प्रो.बी.आर. देवधर और पंडित विनयचंद्र मौद्रगल्य जैसे यशस्वी संगीतकारों ने उनसे शिक्षा प्राप्त की थी। पलुस्कर जी ने अपने सभी शिष्यों से कहा कि वे अपने-अपने गृह नगरों में जाकर गंधर्व महाविद्यालय की स्थापना करें और इस तरह से यह सिलसिला आगे बढ़ता रहा। 1905 में पलुस्कर जी ने नवी मुंबई के वाशी शहर में गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना की। 1906 में उत्तर प्रदेश का प्रथम संगीत विद्यालय बनारस में काशी संगीत समाज संगीत नायक पंडित दरगाही मिश्र के प्रयासों से स्थापित हुआ, जिसके वे संस्थापक प्राचार्य थे। 1914 में पंडित कृष्णराव शंकर पंडित ने अपने पिता शंकर पंडित के नाम पर ग्वालियर में शंकर गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना की। 1926 में प्रयागराज में प्रयाग संगीत समिति की स्थापना हुई। ग्वालियर नरेश और भातखंडे जी के प्रयासों से 1918 में ग्वालियर में माधव संगीत महाविद्यालय स्थापित हुआ। 1926 में ही राय उमानाथ बली, राजेश्वर बली, पंडित भातखंडे जी और उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल सर विलियम मैरिस के प्रयासों से

चित्र औ— उस्ताद नासीर हुसैन खान – रामपुर सेहवासन घराना

© NCERT not to be republished

चित्र अं— लोक कलाकारों द्वारा पारंपरिक लोक वाद्य – वादन

लखनऊ में मैरिस कॉलेज ऑफ हिंदुस्तानी म्यूजिक की स्थापना हुई। देश को आज़ादी मिलने पर मैरिस कॉलेज के तत्कालीन प्राचार्य और भातखंडे जी के शिष्य पंडित श्रीकृष्ण नारायण रतनजानकर जी के प्रयासों से इसका नामकरण भातखंडे हिंदुस्तानी संगीत महाविद्यालय हुआ, फिर यह भातखंडे संगीत संस्थान अभिमत विश्वविद्यालय के नाम से गतिशील हुआ। बड़ौदा नरेश और पंडित भातखंडे की कोशिशों से बड़ौदा में भी एक संगीत महाविद्यालय स्थापित हुआ जो इस समय महाराजा सयाजीराव यूनिवर्सिटी वड़ोदरा का एक भाग है। सौरिंद्र मोहन टैगोर, कैप्टन डे, कैप्टन विलियर्ड, डॉ. कर्नल टायड जैसे प्रबुद्ध लेखकों की शोधपरक पुस्तकों ने भारतीय संगीत के भंडार को समृद्ध किया।

देश को स्वतंत्रता मिलने के पश्चात कलाओं के विषय में नीतिगत निर्णय लेने के लिए विभिन्न राज्यों सहित देश की राजधानी दिल्ली में भी केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी की स्थापना हुई। 1956 में चंडीगढ़ में प्राचीन कलाकेंद्र की स्थापना हुई, तो इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय जैसी प्रथम कलासंगीत विश्वविद्यालय की भी खैरागढ़ (छत्तीसगढ़) के राजा के सौजन्य से स्थापना हुई। लाखों ऐसे लोग जिन्हें संगीत विरासत में नहीं मिला है और जो संगीत से प्रेम करते हैं, वे इन संस्थाओं के माध्यम से संगीत में प्रशिक्षित और पारंगत हो रहे हैं। विभिन्न विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में संगीत प्रशिक्षण की उच्च स्तरीय व्यवस्था हुई है और संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देने वालों को 1955 से प्रतिवर्ष पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण सहित भारत रत्न जैसे अलंकरण मिल रहे हैं तो प्रतिभाशाली संगीतार्थियों को उच्च शिक्षा और शोध कार्य के लिए छात्रवृत्तियाँ और अध्येतावृत्ति भी सरकार की ओर से प्रदान की जाती है। रेडियो का प्रसारण भारत में 1927 से शुरू हो गया था। तब इसका नाम 'इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी लिमिटेड' था। 1936 में यह भारत सरकार के अधीन आई और इसका नामकरण 'ऑल इंडिया रेडियो' हुआ। आकाशवाणी का आगमन संगीत जगत के लिए एक क्रांतिकारी कदम था। जिस समय दिल्ली से मुंबई जाने में एक सप्ताह लग जाता था उस समय दिल्ली में गाते हुए किसी संगीतकार को पूरे देश में एक साथ सुन पाना, किसी आश्चर्य से कम नहीं था। रेडियो और सभागारों के ध्वनि विस्तारक यंत्रों (माइक्रोफोन) ने संगीतकारों को अपने संगीत का स्वरूप बदलने के लिए भी प्रेरित किया। बुलंद और दबंग आवाज़ की जगह कर्णप्रिय, मधुर और मर्मस्पर्शी गायकी को वरीयता मिलने लगी और सांगीतिक प्रस्तुतियों में सौंदर्यात्मक तत्वों का विशेष रूप से समावेश होने लगा। 1970 में दूरदर्शन के आगमन ने श्रवणीय संगीत कला को दर्शनीय भी बना दिया है। अब संगीतकार अपने संगीत के साथ-साथ वेशभूषा, रूप सज्जा, हाव-भाव और मुख मुद्रा पर भी विशेष ध्यान देने लगे हैं।

© NCERT not to be republished

तत्कालीन शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के सत्यप्रयासों से 9 अप्रैल 1950 से दिल्ली में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (Indian Council of Cultural Relations) की स्थापना हुई, जिसके माध्यम से भारत के संगीतकारों को भारतीय संगीत-नृत्य की शिक्षा देने के लिए दुनिया के कई देशों में एक से तीन वर्ष तक के लिए भेजा जाता है और वहाँ के संगीतकारों को भारत में आमंत्रित करके उनके कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इस तरह संगीत और संस्कृति के आदान-प्रदान का सिलसिला आरंभ हुआ। परिषद की शाखाएँ दुनिया के कई देशों में हैं। दुनिया के अनेक देश के युवक-युवतियाँ भारतीय संगीत से आकृष्ट होकर प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में भारतीय संगीत नृत्य सीखने के लिए भारत आते हैं। यह भारतीय संगीत की महानता का प्रमाण है कि अनेक देशों के विश्वविद्यालयों में भारतीय सांगीतिक कलाओं के प्रशिक्षण की उच्चस्तरीय व्यवस्था है और यह भी भारतीय संगीत की महानता का ही परिचायक है कि पंडित रविशंकर के साथ युगल वादन करने वाले बीटल्स प्रमुख जॉन हैरिसन न केवल पंडित रविशंकर के शिष्य बन गए थे, बल्कि सीखते समय भारतीय परंपरा के अनुसार पंडित रविशंकर का चरण स्पर्श कर खुद नीचे बैठते थे। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की दो उच्च स्तरीय पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं— हिंदी में *गगनांचल* और अंग्रेज़ी में *होराइज़िन*।

वर्ष 1952 में अखिल भारतीय स्तर पर केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी की स्थापना का निर्णय लिया गया। तत्कालीन शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने हिंदी में अकादमी और अंग्रेज़ी में AKADEMI लिखने की सिफ़ारिश की, जिसे सर्वसम्मति से मान लिया गया। 28 जनवरी 1953 को भारत के राष्ट्रपति डा. राजेंद्र प्रसाद ने इसका उद्घाटन किया था और उद्घाटन स्वागत भाषण अबुल कलाम आज़ाद ने दिया था। अकादमी संगीत, नृत्य और नाटक के प्रचार-प्रसार के विभिन्न स्तरीय प्रयास करती है। इन विधाओं के प्रतिष्ठित कलाकारों को प्रतिवर्ष अकादमी पुरस्कार स्वरूप एक लाख रूपये और रत्न सदस्यता स्वरूप तीन लाख रूपये प्रदान किया जाता है। अकादमी द्वारा अंग्रेज़ी में *संगीत नाटक*, हिंदी में *संगना*, *योग पर्व* और *राजभाषा रूपाम्बरा* जैसी स्तरीय पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं। अकादमी द्वारा संगीत और नृत्य विषयक उच्चस्तरीय पुस्तकें भी प्रकाशित होती हैं। इसके अलावा *संगीत* (हाथरस), *संगीत कला विहार* (मिरज), *नाद रंग एवं छायानट* (लखनऊ), *स्वर सरिता* (जयपुर), *कला समय* (भोपाल), *स्तोम* (दरभंगा), *अनहद लोक* (प्रयागराज) तथा *आजकल* (दिल्ली) जैसी पत्रिकाएँ भी संगीत-नृत्य के विकास में जुटी हैं।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ में जब राजाओं और नवाबों के साथ-साथ अंग्रेज़ों की पकड़ भी सत्ता पर कमज़ोर पड़ने लगी थी, तब संगीत का एक नया श्रोता-दर्शक वर्ग उभरने लगा था और पलुस्कर जी तथा भातखंडे जी सहित कई अन्य लोग भी संगीत समारोहों का आयोजन करने लगे थे। पलुस्कर जी उस समय अपने कार्यक्रमों के लिए 50 पैसे का टिकट लगाते थे। देश को स्वतंत्रता मिलने के बाद कई अन्य संस्थाओं ने इस तरह का आयोजन करना शुरू किया था। दिल्ली में संगीत नाटक अकादमी और भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद के कार्यक्रमों सहित, विष्णु दिगंबर

© NCERT not to be republished

जयंती, शंकरलाल फेस्टिवल, स्वामी हरिदास संगीत समारोहों की काफी ख्याति है। आकाशवाणी द्वारा आयोजित 'आकाशवाणी संगीत सम्मेलन' अलग-अलग संगीतकारों के साथ देश के अलग-अलग भागों में संपन्न होता है। मुंबई के 'सुर सिंगार संसद' के कार्यक्रमों की और कोलकाता के 'डोबर लेन संगीत समारोहों' की भी विशेष ख्याति रही है। इनके अलावा दिल्ली का 'साहित्य कला परिषद संगीत समारोह', कथक केंद्र (दिल्ली) का 'कथक महोत्सव', मुंबई के नेशनल सेंटर फॉर परफॉर्मिंग आर्ट्स और म्यूजिक फोरम द्वारा आयोजित 'संगीत समारोह', खुजराहो का 'नृत्य समारोह', ओडिशा का 'राजा-रानी संगीत समारोह', ग्वालियर का 'तानसेन संगीत समारोह' और जालंधर के 'हरबल्लभ संगीत समारोह' सहित वाराणसी के 'संकट मोचन संगीत समारोहों' की भी विशेष ख्याति है। विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा आयोजित संगीत समारोह तथा स्थानीय स्तर पर कार्य कर रही कई संस्थाएँ भी समय-समय पर इस तरह के आयोजन करती रहती हैं, जिनमें जयपुर के 'श्रुति मंडल संगीत समारोह', कोलकाता के 'आई.टी.सी. संगीत समारोह', मुंबई के 'गुणिदास संगीत समारोह', पुणे के 'सवाई गंधर्व संगीत समारोह' आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

भारत सरकार स्वयं भी विदेशी सरकारों के साथ मिलकर समय-समय पर भारत महोत्सव का आयोजन बृहद स्तर पर करती है, जिसमें शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम तथा लोक संगीत और नृत्य के अनेक संगीतकारों को भाग लेने के अवसर मिलते रहते हैं। जब भारतीय संगीतकारों का विदेशी संगीतकारों के साथ तालमेल बढ़ा तो भारतीय और पाश्चात्य संगीतकारों ने साथ मिलकर काम करना शुरू किया। पंडित रविशंकर, उस्ताद अली अकबर, पंडित वी.जी. जोग, पंडित भजन सोपोरी, पंडित विश्वमोहन भट्ट, उस्ताद ज़ाकिर हुसैन, पंडित रोनू मजूमदार और पंडित अमय रुस्तुम सोपोरी तथा अनुष्का शंकर जैसे अनेक भारतीय संगतीकारों ने लार्ड यहूदी मेन्यूहीन, जॉर्ज हैरिसन, जुबीन मेहता, आर. वाई. कूडर, जूलियन ब्रीम, आंद्रे, बेला फ्रैंक और जॉन हैजल आदि के साथ मिलकर एलबम बनाते हुए अपने संगीत को विश्वस्तरीय बनाया तो भारतीय नृत्यकारों ने फ्लैमिंगो और स्पेनिश क्लासिकल डांस के साथ अपनी प्रस्तुतियाँ दीं। नतीजा यह हुआ कि मैगसैसे अवार्ड, सोवियतलैंड नेहरू पुरस्कार, ग्रैमी अवार्ड और ऑस्कर सम्मानों से भारतीय संगीतकार भी सम्मानित होने लगे। चूँकि विदेशों में आर्थिक सुदृढ़ता अधिक है, इसलिए कई भारतीय संगीतकार-नृत्यकार तो स्थायी रूप से वहाँ की नागरिकता लेकर वहीं बस गए हैं।

बीसवीं शताब्दी में संगीत के अनेक स्वनामधन्य क्रांतिकारी संगीतकारों के अवतरण के कारण यह युग संगीत का स्वर्ण युग बन गया। इस युग के शिक्षित और चिंतनशील संगीतकारों ने आँखें बंद करके सिर्फ़ घनघोर रियाज़ ही नहीं किया, संगीत पर शोधपूर्ण चिंतन और मनन भी किया और जब मन-मस्तिष्क की खिड़कियाँ खुलीं तो सुखद ठंडे बयार ने सबको प्रफुल्लित कर दिया। हंसध्वनि, चारुकेशी, कलावती जैसे दक्षिण भारतीय रागों का गायन-वादन उत्तर भारतीय संगीतकारों ने आरंभ किया तो दोनों शैलियों के संगीतकारों ने एक साथ प्रस्तुतियाँ देनी भी शुरू की। उत्तर भारतीय वाद्य तानपूरा, सितार और वॉयलिन आदि की बनावट में परिवर्तन करके इन्हें और समृद्ध किया गया। सितार में तुम्बा, चिकारी और तरब के तारों को जोड़ा गया। मुख्य तारों

© NCERT not to be republished

के क्रम में भी परिवर्तन किया गया। 4 तार वाले तानपूरा और वॉयलिन में भी क्रमश: 5 और 6 तारें लगाई जाने लगीं। इसके साथ ही बाँसुरी, सारंगी, शहनाई और संतूर जैसे भारतीय वाद्यों ने तो वॉयलिन, हारमोनियम और गिटार जैसे पाश्चात्य वाद्यों ने भी स्वतंत्र शास्त्रीय वाद्यों के रूप में अपने अस्तित्व का परिचय देना शुरू कर दिया था और आज इक्कीसवीं शताब्दी में तो सिंथेसाइजर, मेंडोलिन और बैंजों जैसे साजों पर भी भारतीय शास्त्रीय संगीत की सुंदर प्रस्तुतियाँ होने लगी हैं।

संगीत के विषय में इस देश में सदियों तक सामंतवादी मानसिकता हावी रही। इस सच्चाई के बावजूद कि शास्त्रीय संगीत की आज की अनेक विधाएँ लोक संगीत की कोख से जन्मी हैं, लोग शास्त्रीय संगीत को तो अभिजात्य और उच्चस्तरीय संगीत मानते रहे, जबकि लोक संगीत को अनपढ़, ग्रामीण किसानों से जोड़कर देखते हुए गौण ही मानते रहे, लेकिन देश को स्वतंत्रता मिलने के बाद इस सोच में बदलाव आया और लोक संगीत तथा नृत्य के कलाकारों को भी एक ओर आकाशवाणी तथा दूरदर्शन द्वारा सर्वोच्च श्रेणी तक के कलाकार के रूप में मान्यता प्रदान की गई, दूसरी ओर देश के प्रतिष्ठित संगीत समारोहों के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय संगीत नृत्य समारोहों और भारत महोत्सव आदि में भी उन्हें सम्मान आमंत्रित किया जाने लगा है। आज लोक और आदिवासी संगीत नृत्य के संरक्षण और संवर्धन के लिए शोध कार्य और परिसंवादों के साथ-साथ अनेक ठोस कदम भी उठाए जाने लगे हैं और अनेक संगीतकारों को क्षेत्रीय स्तर पर चुनकर उन्हें राज्य और केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी पुरस्कारों सहित न केवल पद्म सम्मानों से बल्कि भारत रत्न जैसे अलंकरण से भी विभूषित किया जा रहा है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि जहाँ भारतीय शास्त्रीय संगीत के पुरोधा पंडित रविशंकर और पंडित भीमसेन जोशी को देश का सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न का अलंकरण मिला है, वहीं शहनाई को लोकप्रिय बनाने वाले उस्ताद बिसिम्मलाह खाँ को, असम के लोक गायक डा. भूपेन हजारिका और अद्वितीय पार्श्व गायिका विदुषी लता मंगेशकर को भी इस सम्मान से विभूषित किया गया है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि आज संगीत की सभी विधाओं का प्रचार-प्रसार और चतुर्दिक विस्तार हो रहा है।

चित्र अ:— पंडित भीमसेन जोशी (गायक) – भारत रत्न

चौसठ कलाओं और पाँच ललित कलाओं में संगीत को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। मानव आरंभ से ही अपने कंठ स्वरों और हाव-भाव के माध्यम से अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करता रहा है। सभ्यता के विकास के बाद संगीत इसका सर्वश्रेष्ठ माध्यम बना। विभिन्न स्वरों, रागों, वाद्यों, लय और तालों के साथ-साथ भाव-भंगिमाओं का भी प्रयोग मनुष्य अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए करता रहा है। आरंभिक चरण में संगीत के सिर्फ़ दो मुख्य उद्देश्य थे— ईश्वर की आराधना और अपनी भावनाओं को व्यक्त करना। यह आनंद का भी माध्यम बना—

© NCERT not to be republished

चित्र क— भारत के अभूतपूर्व कलाकार – बड़े गुलाम अली

मानसिक, आत्मिक और बौद्धिक आनंद का माध्यम। लेकिन बदलते समय के साथ संगीत में कई नए आयाम जुड़ते चले गए और यह मानव के सर्वांगीण विकास में सक्षम सिद्ध हो रहा है। संगीत का चिकित्सा के रूप में प्रयोग पहले भी होता था। *चरक संहिता* में इसका उल्लेख है। हमारी 80 प्रतिशत से अधिक बीमारियाँ मानसिक कारणों से होती हैं और मानसिक स्थिति को ठीक करने में संगीत से अधिक कारगर कुछ भी नहीं है। इसे भारत सहित दूसरे देशों ने समझा और म्यूजिक थेरेपी दुनिया के कई देशों में शुरू हो गई। संगीत का यह बहुत बड़ा गुण है कि यह व्यक्ति को मानसिक तनाव, निराशा, हताशा और अवसाद से मुक्त करता है। दिव्यांगता की चुनौतियों को भी संगीतकारों ने बहादुरी से स्वीकारा है। संगीतर्षि पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर और बनारस घराने के प्रतिष्ठित ताबलिक पंडित दुर्गा सहाय, दोनों ही बचपन में अपनी नेत्र ज्योति खो चुके थे। इसीलिए पंडित दुर्गासहाय को लोग सूरदास नन्हू जी के नाम से अधिक जानते हैं। लेकिन, इन दोनों के पास संगीत जैसी कला की ज्योति थी, अत: संगीत के इतिहास में इनका नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित है। सूरदास नन्हू जी के लिए लोग कहते थे कि ईश्वर ने इनकी दो आँखें लेकर इनके हाथ की दसों उँगलियों में रोशनी दे दी है। इसी तरह से पंडित बलवंत राय भट्ट, संत सरवन सिंह गंधर्व, श्री बलेदव कृष्ण शर्मा और डा. अनिल ब्याहार जैसे प्रज्ञा चक्षु संगीतकारों ने संगीत के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। मशहूर संगीतकार जोड़ी सोनिक-ओमी के सोनिक जी जिनका पूरा नाम मनोहर लाल सोनिक था, उन्होंने भी दृष्टिहीनता के आगे हार मानने से इनकार कर दिया और चित्रपट के सदाबहार गीतों को रचा। सुप्रसिद्ध संगीत निर्देशक, गायक, गीतकार स्वर्गीय रवींद्र जैन ने फिल्म संगीत के इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों से अंकित करते हुए स्पष्ट कर दिया है कि मन की आँखों से वह सब कुछ भी देखा जा सकता है जिसे शरीर की आँखों से नहीं देखा जा सकता है। पंडित ज्ञान प्रकाश घोष ने भी अपनी एक आँख खोने के बावजूद संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान बनाया।

इसलिए आज संगीत सीखने का अर्थ सिर्फ़ मंचीय संगीतकार बनना मात्र नहीं रह गया है। आज संगीत की शिक्षा प्राप्त करके व्यावसायिक संभावनाओं में भी वृद्धि हुई है। इस दृष्टि से आज संगीत शिक्षा प्राप्त करके संगीत चिकित्सक भी बना जा सकता है और विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में संगीत अध्यापक; आकाशवाणी और दूरदर्शन में संगीत अधिकारी और संगीत स्टूडियों में रिकार्डिस्ट भी बना जा सकता है। परिकल्पनाशील संगीतकारों की तलाश में

© NCERT not to be republished

विज्ञापन कंपनियाँ भी रहती हैं और फिल्म उद्योग भी। संगीत सीखकर लेखक, समीक्षक भी बना जा सकता है और एक अच्छा व्यक्ति भी, अच्छा संगीतकार बनने के लिए अच्छा इनसान होना आवश्यक है और अच्छा इनसान होने के लिए किसी न किसी कला में अभिरूचि होना आवश्यक है। विशेषकर संगीत हमें सहृदय और संवदेनशील बनाता है। यह हमारे मन में भावुकता का भी विकास करता है और आंतरिक शक्ति का परिवर्धन भी करता है। इसलिए सद्भावना के विकास के लिए भी संगीत और संगीतकारों को ही चुना जाता है। अपने पड़ोसी देशों से हमारे राजनैतिक संबंध चाहे जितने भी कटु हों— सांगीतिक संबंध सदैव मधुर रहते हैं। भैरव, भैरवी शंकरा यमन, बिलावल और दरबारी जैसे राग चाहे विदेशों में गाए जाएँ या भारत में, उनकी स्वरलहरियों द्वारा अभिव्यक्त संवेदनाएँ हर रसिक व्यक्ति को आनन्दित करती हैं और उनके हृदय में अनुकूल भावनाओं से संबंधित रस का संचार करती हैं इसीलिए संगीत को वैश्विक (अंतरराष्ट्रीय) भाषा (यूनिवर्सल लैंग्वेज) कहा जाता है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने एक बार विद्यालयों में संगीत शिक्षा को अनिवार्य बनाने का सुझाव देते हुए कहा था— *'सामवेद* की ऋचाएँ संगीत की खदान हैं। कुरान शरीफ की आयतें भी मधुर ध्वनि से उच्चरित होती हैं और ईसाई धर्म में डेविड के साम सुने तो ये सभी प्रार्थनाएँ ऐसा लगता है मानों हम *सामवेद* ही सुन रहे हैं जो प्रकृति एवं मनुष्य के जीवन ज्ञापन के लिए मंत्रों द्वारा समाज के लोगों को सुनाई जाती थी। इसलिए मैं इस मत का प्रबल समर्थक हूँ कि योग और संगीत की शिक्षा बच्चों को प्राथमिक कक्षा से ही अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए।' व्यावसायिक रूप से संगीत को न अपनाने की इच्छा के बावजूद सभी को संगीत इसलिए भी सीखना चाहिए कि यह हमें बौद्धिक, मानसिक और आत्मिक रूप से मज़बूत करता है। भारत धर्म और आदर्श प्रधान देश है। भारतीय विचारधारा आरंभ से ही आदर्श की भावभूमि पर प्रवाहित होती रही है जिसका प्रयोजन लोक कल्याण रहा है। इसके कण-कण में राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर और नानक आदि की आत्मा समाई हुई है। इस आदर्श देश के निवासी शुरू से ही सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रह के पंच महाव्रतों को मानते आ रहे हैं। ऐसे उच्च आदर्श रूप में पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि व आकाश से नि:सृत 'नाद' पर प्रतिष्ठित संगीत निश्चित रूप से संपूर्ण जगत के लिए कल्याणकारी व सर्वोत्कृष्ट कला है।

© NCERT not to be republished

अगर आप ...

पढ़ाई एवं परीक्षा

निजी संबंधों

करियर

साथियों के दबाव

को लेकर किसी भी तरह के तनाव, चिंता, परेशानी, उदासी या उलझन में हैं, तो काउंसलर की मदद लें

राष्ट्रीय टोल-फ्री काउंसलिग टेली-हेल्पलाइन
सुबह 8 बजे से रात 8 बजे तक
सप्ताह के प्रत्येक दिन

मनोदर्पण

कोविड-19 के प्रकोप के दौरान और उसके बाद विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य एवं कल्याण हेतु मनो-सामाजिक सहायता
(आत्मनिर्भर भारत अभियान के तहत शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार की एक पहल)

www.https://manodarpan.education.gov.in

© NCERT not to be republished

विषयवस्तु

आमुख *iii*

प्राक्कथन *v*

भूमिका— भारतीय संगीत का ऐतिहासिक अवलोकन *xi*

क. शास्त्र

1. भारतीय संगीत का इतिहास 3
2. हमारे प्राचीन ग्रंथ 25
3. हिंदुस्तानी संगीत के पारिभाषिक शब्द 35
4. प्राचीन एवं आधुनिक गायन शैलियाँ 49
5. राग वर्गीकरण 67

ख. क्रियात्मक

6. राग परिचय एवं बंदिशें 77
7. हिंदुस्तानी संगीत में वाद्य यंत्र 124
8. प्रमुख तालों के ठेके एवं लयकारी 140
9. संगीत के प्रमुख कलाकारों का परिचय व योगदान 152

परिशिष्ट *167*

चित्र आभार *170*

© NCERT not to be republished

हिंदुस्तानी एवं कर्नाटक संगीत पद्धतियों के क्रमिक विकास को दर्शाता कलात्मक वृक्ष

© NCERT not to be republished